Plant Pathology

विज्ञान की इस शाखा को पादप रोग विज्ञान (Plant pathology या Phytopathology : Gr phyton-plant , pathos-suffering, logos-discourse) कहते हैं, इस विषय से सम्बन्धित विशेषज्ञों को पादप रोग वैज्ञानिक (plant pathologist) कहा जाता है।

विज्ञान की इस शाखा के अन्तर्गत मूलतः पादपों के रोगों (plant diseases) का अध्ययन किया जाता है, अतः यह जानना सामयिक होगा कि रोग (disease) से हमारा क्या तात्पर्य है ?

रोग क्या है ? (What is Disease ?)

जब शब्द "रोग" का उल्लेख किया जाता है तो हर व्यक्ति इसके अभिप्राय को बड़ी सहजता से समझ लेता है। लेकिन इसके बावजूद 'रोग" को परिसीमित करना एवं उसकी सुनिश्चित परिभाषा देना एक जटिल कार्य है। आंग्ल भाषा में disease का अक्षरशः अर्थ है Dis + ease अर्थात् आराम नहीं वाली स्थिति, हिन्दी में शब्द रोग की उत्पत्ति धातु रुज से हुई है, जिसका तात्पर्य अवरोध है। जीवन की सामान्य प्रक्रिया में आया अवरोध ही रोग है। "रोग" की वैज्ञानिक परिभाषायें प्रस्तुत करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि रोग न तो कोई कारण (cause) है और न ही कोई दशा (condition) । वास्तव में देखा जाय तो रोग एक परिणाम (result) है जिसका कोई न कोई कारक होता है जैसे कोई अन्य सजीव या प्रतिकूल वातावरण।

पादप रोगों को अनेक प्रकार से परिभाषित किया गया है। कुछ प्रसिद्ध परिभाषायें निम्न प्रकार हैं

1. हील्ड (Heald, 1933)-पादप या इसके कुछ अंगों या भागों की स्थिति में हुआ कोई भी परिवर्तन, जो जैविक कार्यों के निष्पादन में अवरोध या गड़बड़ी उत्पन्न कर दे, रोग कहलाता है।

2. स्टैकमैन एवं हारार (Stakman and Harrar, 1957)-कोई भी जैवक्रियात्मक विकार (physiological disorder) या संरचनात्मक असामान्यता (Structural abnormality) रोग है, यदि वह पादप या उसके किसी भी भाग या उत्पाद के लिये हानिकारक होती है या फिर उनके आर्थिक मूल्य को घटा देती है।

3. एग्रिक्स (Agrios, 2005)- रोग, परपोषी की कोशिकाओं एवं उत्तकों की वह असम्यक्कार्यता (malfunctioning) है जो रोगजनक अभिकर्ताओं या वातावरणीय कारकों के सतत् उद्दीपन के फलस्वरूप उनमें हो जाती है तथा जिसके कारण लक्षणों का विकास होता है।

रोग के घटक एवं रोग पिरामिड (The Components of disease and the disease Pyramid)

रोग के तीन मुख्य घटक हैं जिनमें एक ग्राही परपोषी (susceptible host), एक उग्र (virucent) तथा आक्रामक (aggressive) रोगकारक (pathogen) तथा अनुकूल वातावरण (favourable environment) आसानी से पहचाने जा सकने वाले घटक सम्मिलित हैं। स्टीवेन्स (Stevens, 1960), जैडोक्स (Zadoks, 1972) तथा वॉनडर प्लाक (Vander Plank, 1975) ने एक चौथा कारक समय (time) को माना और बताया कि समय भी कई तरीकों से महत्त्वपूर्ण है, जैसे-परपोषी व रोगकारक दोनों की उपस्थिति का एक ही समय होना, बीजाणु प्रकीर्णन तथा अंकुरण का उपयुक्त समय होना आदि ।

इस प्रकार परपोषी, रोग कारक, वातावरण तथा समय मिलकर एक अचुर्आयामी (four dimensional) रोग–पिरामिड (disease-pyramid) बनाते हैं। इस पिरामिड के घटकों का मात्रात्मक मापन कर इसके आयतन से किसी पादप या पादप समुदाय पर रोग की मात्रा का मापन कर सकते हैं। पिरामिड के किसी घटक की मात्रा कम करके इसके आयतन को कम कर सकते है

Aadhar Institute jguruji

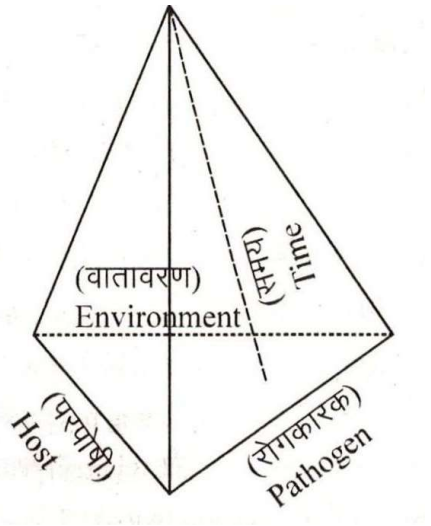

चित्र — रोग पिरामिड : एक परपोषी—रोगकारक—वातावरण—समय रोग तंत्र का ज्यामितीय प्रारूप।

रोगों का वर्गीकरण (Classification of diseases)

पादप रोगों को वर्गीकृत करने के अनेक आधार हैं इनमें से सर्वाधिक प्रचलित आधार कारणात्मक कारक की प्रकृति है। इस प्रणाली के अनुसार पादप रोगों को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जाता है

(I) अपरजीवी, असंक्रामक रोग या अजैविक रोग

(Non-parasitic, non-infectious or inanimate diseases)

यह वातावरण की प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण उत्पन्न होते हैं तथा असंक्रामक (non infectious) होते है। ये वे रोग हैं जिनके साथ कोई भी जैविक या विषाणु रोगकारक सम्बन्धित नहीं होते। इनका संचरण रोगी से स्वस्थ पादप तक नहीं होता है। असंक्रामक रोग पादपों को किसी भी अवस्था में प्रभावित कर सकते हैं इनके द्वारा उत्पन्न लक्षण पर्यावरणीय कारकों के अनुसार भिन्न-भिन्न होते हैं। इनके मुख्य कारक निम्न हैं

1. तापमान का प्रभाव (Temperature effects)

सामान्यतः पादप 1 से 40°C तक के तापक्रम के मध्य वृद्धि करते हैं। विभिन्न पादपों की प्रकृति के अनुसार अनुकूल तापक्रम उच्च या निम्न हो सकता है।

(i) उच्च तापक्रम प्रभाव (High-temperature effects)- उच्च प्रकाश, ऑक्सीजन कमी, उच्च वेग युक्त हवा, निम्न तुलनात्मक आर्द्रता के कारण उच्च तापक्रम प्रभाव देखा जाता है। उच्च तापक्रमों पर सामान्यतः माँसल फलों जैसे सेब, टमाटर, प्याज कन्द, आलू इत्यादि में विवर्णन (discolouration). जलाग्राही धब्बे (water soaked spots), फफोलन (blistomy) अथवा ऊतकों का शुष्कन (desiccation) लक्षण देखे जाते हैं। उच्च तापक्रम आवश्यक विकरों (enzymes) को निष्क्रिय कर असामान्य जैव रासायनिक क्रियाएँ उत्पन्न करता है तथा कोशिका मृत्यु को उत्तेजित करता है। उच्च तापक्रम पर पत्तियाँ भी पहले पीले-हरे रंग के धब्बे युक्त हो जाती है और अंततः भूरे सूखे धब्बों के रूप में लक्षण प्रकट करती हैं। इस प्रकार उच्च तापक्रम सेब के विवर्णन (discolouration), आलू का कृष्ण क्रोड (black heart of potato) आदि रोगों के लिए उत्तरदायी होता है।

(ii) निम्न तापक्रम (Low temperature effects)- अत्यधिक निम्न तापक्रम गर्म जलवायु वाले पादपों (warm-weather plants) जैसे मक्का (corn), सेम (beans) आदि को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। हिमांक बिन्दु (freezing point) से कम तापक्रम पादपों

Aadhar Institute iguruji

में अनेक क्षतियाँ (injuries) उत्पन्न करता है। आडू (peach), चैरी (cherry) तथा अन्य पादपों में फलों, अपरिपक्व फलों तथा कभी-कभी माँसल शाखाओं (succulent twigs) पर विवर्णन (discolouration), कॉर्की ऊतक (corky tissue) जैसे लक्षण पाला (frost) पड़ने पर दिखाई देते हैं। निम्न तापक्रम पर कोशिका में व कोशिका के बाहर बर्फ का निर्माण होने पर पहले मुख्य संवहन ऊतकों (vascular tissues) पर प्रभाव पड़ता है और वलय के समान ऊतक क्षय के लक्षण दिखते हैं जो अंततः धब्बे युक्त ऊतकक्षय (blotch type necrosis) प्रकट करता है। उदाहरण- आल, टमाटर आदि में। निम्न तापक्रम का प्रभाव आंतरिक पादपों (indoor plants) पर भी देखा जाता है जिनमें स्तंभित वृद्धि (stunting), पीलापन (yellowings), पर्ण या कलिका पतन (leaf or bud drop) आदि प्रमुख लक्षण है।

2. आर्द्रता का प्रभाव (Moisture effects)

वातावरणीय आर्द्रता के साथ-साथ मृदा वातन (soil aeration) व मृदा आर्द्रता (soil moisture) भी पादपों की स्वस्थ वृद्धि को प्रभावित करती है।

(i) निम्न मृदा आर्द्रता प्रभाव (Low soil moisture effects)- निम्न मृदा आर्द्रता वाले क्षेत्रों में पादपों में कुछ ऐसे लक्षण दिखाई देते हैं जिससे उनके रोगयुक्त होने का आभास होता है। पर्याप्त मृदा आर्द्रता की कमी से पादप स्तंभित वृद्धि वाले (stunted), पीलापन (yellowing) लिए हुए, कम पत्तियों वाले, कम फूलों व फलों की संख्या युक्त हो जाते हैं और अत्यधिक सूखा होने पर अंततः मुरझाकर म्लानि (wilt) प्रकट करते हैं व मृत हो जाते हैं।

(ii) निम्न सापेक्ष आर्द्रता प्रभाव (Low relative humidity effects)- वातावरण में निम्न आर्द्रता तथा उच्च वायु वेग संयुक्त रूप से पत्तियों से अत्यधिक जल हानि उत्पन्न करते हैं परिणामस्वरूप पादपों में पर्ण परिदाह (leaf scorching) या पर्ण दाह (burning), संकुचित फल (shrivelled fruits) तथा स्थाई या अस्थाई म्लानि (wiling) के लक्षण प्रकट होते हैं।

(iii) उच्च मृदा आर्द्रता प्रभाव (High soil moisture effects)-जल निकास की उचित व्यवस्था का अभाव अथवा बाढ़ की स्थिति में उच्च मृदा आर्द्रता का प्रभाव देखा जा सकता है। उच्च मृदा आर्द्रता के कारण पादपों में निम्न ओज (vigor), म्लानि (wilt), पत्तियों में पीलापन (yellowing) जैसे प्रभाव दिखाई देते हैं। अत्यधिक आर्द्रता के प्रभाव से संभवतः ऑक्सीजन की कमी के कारण पादपों की रेशेदार मूलें (fibrous roots) नष्ट हो जाती हैं तथा पादपों द्वारा विषैले धात्विक (toxic metals) तत्वों का अवशोषण होने लगता है। जल की अधिक मात्रा में 'एडिमा' (edema) के लक्षण दिखते हैं जिसमें पर्ण की निचली सतह पर या स्तम्भ पर छोटे-छोटे असंख्य उभार (bumps) दिखते हैं जो वास्तव में कोशिकीय संहति होते हैं। इस तरह के लक्षण चैरी, अंगूर, टमाटर आदि में देखे जा सकते हैं।

3. अपर्याप्त ऑक्सीजन (Inadequate oxygen)

उच्च मृदा आर्द्रता तथा उच्च तापक्रम प्रत्यक्ष रूप से अपर्याप्त ऑक्सीजन की स्थिति के मुख्य कारण हैं। ऑक्सीजन की कमी के कारण जड़ों का शुष्कन (desiccation) तथा क्षति (collapse) होना मुख्य | प्रभाव है जिससे अन्ततः उनकी मृत्यु हो जाती है। ऑक्सीजन की कमी का प्रभाव संग्रहित (stored) फलों | आदि में केन्द्रीय (central) भाग में कालेपन के रूप में प्रकट होता है। उदाहरण-आल का कष्ण क्रो (black heart potato) | इसमें ऑक्सीजन की अपर्याप्त आपूर्ति से एन्जाइम्स की गतिविधियाँ अव्यवस्थित होकर सामान्य पादप घटकों को गहरे मेलेनिन (melanin) वर्णकों (pigments) में बदल देती हैं।

4. प्रकाश (Light)

प्रकाश की कमी पर्णहरित (chlorophyll) निर्माण को कम करके पादपों में पर्वों (internodes) की लम्बाई को बढ़ाती है तथा पतले-दुबले (slender) पादप निर्माण को प्रेरित करती है। इसके परिणामस्वरूप फूलों व फलों का अपरिपक्व विगलन (premature dropping) देखा जाता है। यह स्थिति पांडुरता (etiolation) कहलाती है। कभी-कभी पत्तियों पर पीले-भूरे या सिल्वर धब्बे भी देखे जा सकते हैं।

Aadhar Institute iguruji

5. वायु प्रदूषण (Air Pollution)

पादपों को हानि पहुँचाने वाले वायु प्रदूषकों में अधिकांश प्रदूषक गैंसें हैं लेकिन कुछ कणीय पदार्थ व धूल कण भी पादपों को प्रभावित करते हैं। इथाइलीन, अमोनिया व क्लोरीन आदि वायु प्रदूषक निश्चित स्थलों पर ही अपने लक्षण प्रकट करते हैं।

(i) मुख्य वायु प्रदूषक (Main air pollutants)-_ मुख्य वायु प्रदूषक सल्फर डाइ ऑक्साइड तथा हाइड्रोजन फ्लोराइड है जो शोधक कारखानों, ईंधन के दहन आदि से सीधे ही निष्कासित होती है जबकि NO_2, O_3, आदि द्वितीयक उत्पादों (Secondary products) के रूप में पादपों को क्षति पहुँचाते हैं। इन वायु प्रदूषकों के कारण चितकबरे धब्बे (mottling), पर्णों में हरिम हीनता (chlorosis of leaves), चित्ती या धब्बे (spots), विरंजन (bleaching), कांस्यन (bronzing), ऊतकक्षय (necrosis), स्तंभित पादप वृद्धि (stunted plant growth) आदि लक्षण पादप के विभिन्न भागों में प्रकट होते हैं।

(ii) अम्ल वर्षा (Acid rain)- प्रदूषण के कारण वातावरण में उपस्थित सल्फर तथा नाइट्रोजन ऑक्साइड्स की अधिक मात्रा वर्षा के समय वर्षा के जल (rain-water) में घुलकर वर्षा-जल का pH मान उसके सामान्य pH 5.6 से भी कम कर देती है। ऐसी वर्षा अम्ल-वर्षा (acid-rain) कहलाती है जिसका अम्लीय जल पादपों को नुकसान पहुंचाता है।

6. पादपों में पोषक तत्वों की कमी (Nutritional deficiencies in plants)

पादपों को वृद्धि के लिए अनेक तत्वों की आवश्यकता होती है जिनमें से कुछ तत्व अधिक मात्रा में जबकि कुछ तत्व सूक्ष्म मात्रा में आवश्यक होते हैं, इन्हें क्रमशः वृहत् मात्रिक तत्त्व व सूक्ष्ममात्रिक तत्व कहा जाता है। इन तत्त्वों की कमी से पादप के लगभग सभी भागों में विभिन्न लक्षण प्रकट होते हैं जो उस तत्त्व विशेष द्वारा किए जाने वाले कार्य से सम्बन्धित होते है। इनकी कमी से उत्पन्न कुछ लक्षण हैं- सेब में शीर्षरंभी क्षय (die back), ऊतकक्षय (necrosis), पुंजीभवन (rosetting), सेब का लघुपर्ण (little leaf of apple), ककोआ का हसिया पर्ण (sickle leaf of cacoa), मक्का का श्वेताग्र रोग (white tip of corn) आदि।

7. मृदा खनिजों का आविष प्रभाव (Soil minerals toxic to plants)

कभी-कभी मृदा में आवश्यक व अनावश्यक तत्वों की मात्रा अत्यधिक होती है, जिनमें से किसी की भी उपस्थिति पादपों के लिए घातक होती है। वृहत् मात्रिक तत्वों जैसे नाइट्रोजन व पोटेशियम की अधिक मात्रा की अपेक्षा सूक्ष्म मात्रिक तत्वों की अधिक मात्रा में उपलब्धता या अनुपलब्धता पादपों के प्रति ज्यादा नुकसानदायक होती है। सोडियम लवणों विशेषतः सोडियम क्लोराइड, सोडियम सल्फेट, सोडियम कार्बोनेट आदि के कारण मृदा का pH बढ़ जाता है तथा इस क्षारीय मृदा (alkaline soil) के कारण हरिमहीनता (chlorosis), स्तंभित या रूद्धवृद्धि (stunting), पर्ण दाह (leaf burn), म्लानि (wilting) यहाँ तक कि पादपों की मृत्यु जैसे परिणाम दिखाई देते हैं। उदाहरण- गेहूँ तथा सेब क्षारीय (alkaline) मृदा के प्रति संवेदनशील होते हैं।

8. खरपतवारनाशी का प्रभाव (Effects of herbicides)

खरपतवारनाशी के प्रयोग से उगाए जाने वाले पादपों में अनेक असामान्यताएँ उत्पन्न हो जाती है। प्रभावित पादप विरूपण (distortion), पर्ण पीतता (yellowing of leaves), भूरापन (browning), शुष्कता (drying), पर्ण विलगन (shedding of leaves), रूद्धवृद्धि (stunting) और कभी-कभी पादप मृत्यु जैसे लक्षण प्रकट करते हैं।

Aadhar Institute iguruji

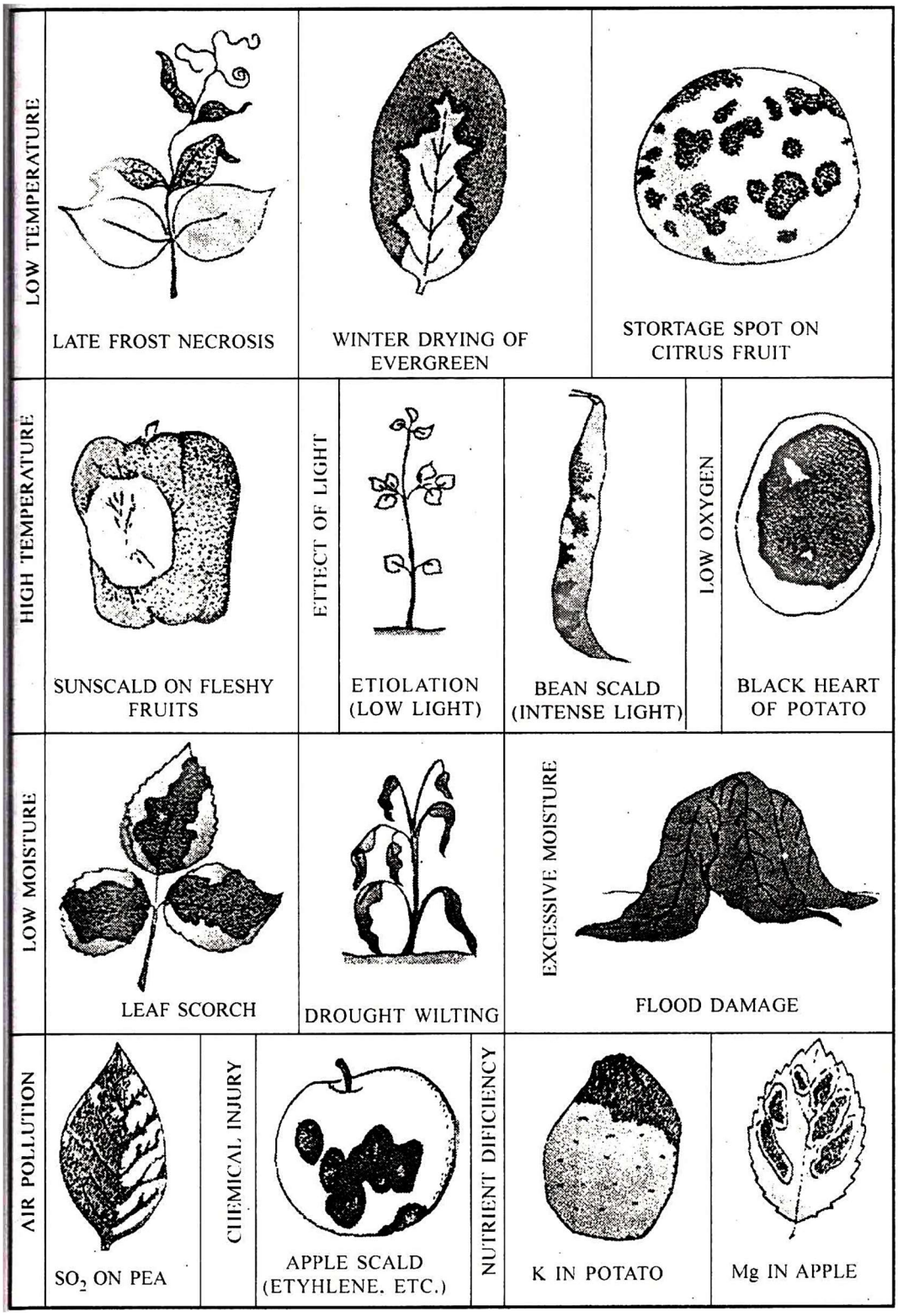

चित्र — असंक्रामक रोगों के लक्षण

इसके अतिरिक्त ओला वृष्टि (hail), तूफान (storm), तड़ित (lightning) तथा अनुपयुक्त कृषि क्रियाएँ भी अपरजीवी रोग जनकों के रूप में प्रभावी होते हैं। कवकनाशी, कीटनाशी तथा उर्वरकों का भी उच्च सान्द्रता पर प्रयोग करने से दग्ध पर्ण (leaf burn) या धब्बे (spotting) अथवा फलों में विविध लक्षण प्रकट होते हैं।

II. परजीवी या रोग संक्रामक या जैविक रोग (Parasitic or Infectious diseases, or Animate diseases)

ये किसी सजीव के संक्रमण के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं। प्रभावित पादप परपोषी (host) या संवेदी (suscept) कहलाता है तथा रोग कारक सजीव को परजीवी (parasite) या रोगजनक (pathogen) कहते हैं। ये रोग हमेशा संक्रामक होते हैं तथा अनेक माध्यमों द्वारा रोगी पादप से स्वस्थ पादपों तक एक स्थान से दूसरे स्थान तक संचारित होते हैं। विभिन्न प्रकार के परजीवी रोग कारक निम्न प्रकार हैं

1. जन्तु (Animals)-(i) गोल कृमि (nematodes), (ii) प्रोटोजोआ (Protozoa) (iii) कीटों (insects) एवं अन्य जन्तुओं द्वारा उत्पन्न पादप रोगों का अध्ययन सामान्यतः पादप रोग विज्ञान के अर्न्तगत नहीं किया जाता है।

2. पादप (Plants)-(i) कवक (fungi), (ii) अवपंक कवक (slime molds), (iii) माइकोप्लाज्मा | (mycoplasmas), (iv) जीवाणु (bacteria), (v) शैवाल (algae) एवं (vi) उच्च पादप (higher plants)

3. विषाणु (Viruses) व विषाणुक (Viroids)-विभिन्न प्रकार के विषाणु एवं विषाणुक ।

परजीवी रोगों को अन्यन्त्र आधारों पर भी वर्गीकृत किया जा सकता है जैसे रोग की क्षेत्र विशेष या/एवं समय विशेष में उपस्थिति (occurrence), संक्रमित भागों का विस्तार (extent) या रोगों का शाश्वतीकरण (perpetuation), लक्षण (symptoms), परपोषी (host), प्राप्ति स्थल, इत्यादि।

क्षेत्र विशेष या/एवं समय विशेष में उपस्थिति के आधार पर परजीवी रोग निम्न प्रकार के माने गये है।

(1) विशेष क्षेत्रीय रोग (Endemic diseases) : यह वह रोग है जिनका विस्तार भौगोलिक दृष्टि से सीमित होता है तथा उस क्षेत्र विशेष में न्यनाधिक रूप में हमेशा ही उपस्थित रहते हैं। विशेषक्षेत्रीय रोग मृदुल (mild) या उग्र (severe) रूप में परिवर्तित होते रहते हैं।

(2) महामारी (Epidemic diseases) : सामान्यतः व्यापक क्षेत्र में उग्र रूप धारण कर लेने वाला रोग महामारी कहलाता है। यह नियतकालिक होता है। पादपों के सन्दर्भ में ऐसे रोगों को पादप-महामारी (epiphytotic) कहते हैं।

(3) कदाचनिक रोग (Sporadic diseases): यह वास्तव में एक प्रकार की महामारी ही है जो अनियंत्रित अंतराल में अनिश्चित स्थानों पर यदाकदा उत्पन्न होती रहती है।

संक्रमित भागों के विस्तार के अनुसार दो प्रकार के रोग माने गये हैं

(1) सर्वांगी (systemic): इन रोगों से पादप के सभी भाग प्रभावित होते हैं।

(2) स्थानीकृत (Localised) : इन रोगों में कुछ अंगों के, कुछ भाग ही प्रभावित होते हैं, जैसे आलू - की अगेती अंगमारी (early blight of potato)

शाश्वतीकरण (perpetuation) एवं प्राथमिक संक्रमण विधि के आधार पर रोगों के निम्नलिखित वर्ग माने जाते हैं

(1) मृदोढ़ रोग (Soil borne diseases)-रोगजनक के मृदा में उपस्थित रहने के कारण प्रारम्भिक क्रमण मृदा से ही होता है। उदाहरण- सरसों का श्वेत किट्ट ।

(2) बीजोढ़ रोग (Seed borne disease)-रोगजनक, संक्रमित बीजों में उपस्थित रहता है अतः रोग को पुनरावृति बीजों के कारण ही होती है। उदाहरण- गेहूँ या जौ के कंड।

(3) वातोढ़ रोग (Air borne disease)-वायु में उपस्थित रोग जनक के कारण प्राथमिक संक्रमण होता है। रोग का प्रसार भी प्रायः वायु द्वारा ही होता है। ऐसे रोग वातोढ़ माने जाते हैं। उदाहरणान्यों के किट्ट रोग।

Aadhar Institute iguruji

लक्षणों के आधार पर रोग, म्लानी (wilts), विगलन (rot), अंगमारी (blight), किट्ट (rust), कंड smuts), मोज़ेक (mosaic) इत्यादि हो सकते हैं। इसी प्रकार परपोषी (host) के आधार पर इन्हें धान्यों के रोग (diseases of cereals), फलों के रोग (fruit diseases), जड़ों के रोग (root diseases), चारे के रोग (forage diseases) आदि नामें से जाना जाता है। प्राप्ति स्थान के आधार पर इन्हें खेतों के रोग (field | diseases), हाट रोग (market diseases), गोदाम के रोग (storage diseases) आदि कहा जाता है।

पादपों में रोगों के लक्षण (Symptoms of diseases in Plants)

प्रत्येक रोगग्रस्त पादप कुछ विशिष्ट संकेतों की सहायता से यह प्रदर्शित कर देता है कि वे रोग विशेष से पीड़ित है। रोग दशा के इन दृष्टिगोचर संकेतों को ही लक्षण (symptoms) कहते हैं। परिभाषा की दृष्टि से शरीर या उसकी क्रियाओं में हुये उस दृष्टिगोचर परिवर्तन को रोग लक्षण कहते हैं जिसके द्वारा जैवक्रियात्मक प्रक्रियाओं के सामान्य क्रम में हुए व्यवधान का पता लगता हो।

लक्षण- वास्तव में लक्षण पादप की वृद्धि एवं विकास पर रोगजनक द्वारा डाले गये प्रभावों का परिणाम होते हैं जैसे परजीवी द्वारा भोजन अवशोषण या उपापचयी उत्पादों का स्राव या ऊतकों का विनाश इत्यादि।

रोग की इन बाह्य अभिव्यक्तियों के अतिरिक्त रोगग्रस्त पादप पर परजीवी के प्रजनन अंग; कवकजालीय संहतियाँ, प्रसुप्त संरचनायें आदि भी दृश्य हो जाती है। यह रोग के लक्षण न होकर रोग के चिन्ह (sign) माने जाते हैं। लक्षणों एवं चिन्हों का नैदानिक (diagnostic) महत्व होता है। पादपों में रोगों के कुछ प्रमुख लक्षणों एवं चिन्हों का विवरण आगामी कुछ पृष्ठों में दिया जा रहा है।

Aadhar Institute iguruji

I. लक्षण (Symptoms)

जैसा कि पूर्व में लिखा जा चुका है कि रोगजनक की उपस्थिति के कारण परपोषी के शरीर एवं कार्यों में हुए दृष्टिगोचर परिवर्तन ही लक्षणों के रूप में पहचाने जाते हैं। पादप रोगों के सामान्य लक्षणों को तीन आधारभूत वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। यथा-

1. अतिवृद्धि एवं अतिवर्धन (Hypertrophy and hyperplasia)

2. ऊतकक्षय (Necrosis)

3. रुद्धवर्धन (Hypoplasia)

1. अतिवृद्धि एवं अतिवर्धन (Hypertrophy and hyperplasia)

इस समूह में वे लक्षण आते हैं जो पादप या उसके किसी अंग के अति परिवर्धन (over development) के परिणाम होते हैं। संघटक कोशिकाओं के असामान्य विवर्धन (abnormal enlargement) के कारण आकार में वृद्धि को अतिवृद्धि (hypertrophy) कहते हैं तथा उद्दिपत कोशिकाओं के अनियमित विभाजनों के फलस्वरूप उनकी संख्या में वृद्धि को अतिवर्धन (hyperplasia) कहते हैं।

इसमें पिटिका निर्माण (gall formation), शोध (swelling), पर्ण कुंचन (leaf curl), कूर्चीसम रोग (witches broom), अंगों का रूपान्तरण (transformation of organs), विस्तारित पर्व (elongated nodes) आदि प्रमुख लक्षण हैं जो विभिन्न रोगजनकों द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं।

2. ऊतकक्षय (Necrosis)

कोशिकाओं एवं ऊतकों की स्थानीकृत एवं द्रुत मृत्यु को ऊतकक्षय (necrosis) कहते हैं। ऊतकक्षय उच्च शीत या ताप के प्रभाव अथवा अत्यधिक आविष यौगिकों (highly toxic compounds) के प्रभाव का परिणाम होता है जिससे कोशिकांगों या कोशिका कलाओं की तुरन्त क्षति हो जाती है।

जीवाण्वीय प्रकाशसंश्लेषण (Bacterial photosynthesis)

- हरे पौधों के समान कुछ बैंगनी (Purple) तथा हरे सल्फर बैक्टीरिया प्रकाश की उपस्थिति तथा O_2 की अनुपस्थिति में अपने कार्बनिक भोजन का संश्लेषण करने में सक्षम होते हैं, जिसे जीवाण्वीय प्रकाशसंश्लेषण कहते हैं।
- **वॉन नील ऐसे प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने इन समानताओं को दर्शाया। प्रकाशसंश्लेषण के दौरान जीवाणुओं में ऑक्सीजन निष्कासित नहीं होती है।** इनका प्रकाशसंश्लेषण नॉन ऑक्सीजेनिक होता है, क्योंकि बैक्टीरिया हाइड्रोजन दाता के रूप में जल (H_2O) के स्थान पर H_2S का प्रयोग करता है। प्रकाश–संश्लेषी बैक्टीरिया अवायुवीय होते हैं। सायनोबैक्टीरिया के अतिरिक्त (जिसमें PSI तथा PSII दोनों होते हैं) सभी बैक्टीरियाओं में केवल एक वर्णक तंत्र (PSI) पाया जाता है। बैक्टीरियाओं में दो प्रकार के प्रकाश संश्लेषी वर्णक होते हैं : **बैक्टीरियोक्लोरोफिल, बैक्टीरियोविरिडिन।** बैक्टीरियोक्लोरोफिल में दो हाइड्रोजन के साथ एक पायरॉल वलय होता है। इस कारण से यह क्लोरोफिल से भिन्न होता है।

प्रकाशसंश्लेषी बैक्टीरिया निम्न तीन श्रेणियों के अन्तर्गत आते हैं

(1) हरे सल्फर बैक्टीरिया : इनमें क्लोरोबियम क्लोरोफिल पाया जाता है जो प्रकाश की 720-750nm (फॉर रेड प्रकाश) तरंगदैर्ध्य को अवशोषित करते हैं। उदाहरण – क्लोरोबियम।

(2) बैंगनी सल्फर बैक्टीरिया : उदाहरण – क्रोमेटियम।

(3) बैंगनी नॉन–सल्फर बैक्टीरिया : उदाहरण – रोडोस्पाइरिलम, रोडोस्यूडोमोनास

बैक्टीरियल क्लोरोफिल की विशेषतायें।

(1) कोई निश्चित क्लोरोप्लास्ट नहीं होता है, किन्तु संरचना सामान्य वर्णक युक्त होती है। जिसे क्रोमेटोफोर (शब्द शिमिट द्वारा प्रतिपादित कहते हैं।)

(2) क्लोरोबियम क्लोरोफिल या बैक्टीरियोक्लोरोफिल होता है।

(3) लम्बे तरंगदैर्ध्य (720-950nm) वाले प्रकाश का प्रयोग करते है।

(4) H_2O का उपयोग नहीं होता (किन्तु H_2S या अपचयित अन्य कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थ) है।

(5) O_2 का निष्कासन नहीं होता ।

(6) प्रकाश अपचायक $NADH_2$ ($NADPH_2$ नहीं) होता है।

(7) केवल एक प्रकाशक्रिया तथा एक वर्णक तंत्र होता है जिसका अभिक्रिया केन्द्र P_{890} होता है।

(8) चक्रीय प्रकाशफॉस्फोकरण प्रभावी होता है।

(9) यह प्रकाश की उपस्थिति तथा ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में होता है।

रसायनसंश्लेषण (Chemosynthesis)

बैक्टीरिया (जीवाणुओं) के कुछ प्रकार रसायनसंश्लेषण से ऊर्जा प्राप्त करते है। कार्बोहाइड्रेट निर्माझा की यह प्रक्रिया जिसमें जीव अकार्बनिक यौगिकों से रासायनिक अभिक्रियाओं के द्वारा ऊर्जा प्राप्त करते है। रसायनसंश्लेषण (Chemosynthesis) कहलाती है। इन रसायनस्वपोषी (chemoautotrophic) बैक्टीरियाओं को प्रकाश की आवश्यकता नही होती तथा कोशिका की कार्बनिक आवश्यकताओं का संश्लेषण CO_2 तथा H_2O से कहते हैं। लवणों की आवश्यकता की पूर्ति ये अकार्बनिक पदार्थ (H_2, NO_3^- , SO_4^{2-} या कार्बोनेट) के ऑक्सीकरण से करते हैं। रसायन संश्लेषण के कुछ उदाहरण –

(1) नाइट्रीकारक बैक्टीरिया (Nitrifying bacteria) : उदाहरण – नाइट्रोसोमानास, नाइट्रोकोकस, नाइट्रोबेक्टर आदि।

(2) सल्फर बैक्टीरिया (Sulphur bacteria) : उदाहरण – बेजीटोआ, थायोथ्रिक्स तथा थायोबैसिलस।

(3) आयरन बैक्टीरिया (Iron bacteria) : उदाहरण, फेरोबैसिलेस, लेप्टोथ्रिक्स तथा क्लेडोथ्रिक्स।

(4) हाइड्रोजन बैक्टीरिया (Hydrogen bacteria) : उदाहरण – बेसीलस पेन्टोट्राफस।

(5) कार्बन बैक्टीरिया (Carbon bacteria) : उदाहरण – कार्बोक्सीडोमोनास, बैसिलस ओलिगोकार्बोफिलस।

Aadhar Institute iguruji

ब्लैकमेन का सीमाकारी कारक नियम

एफ.एफ. ब्लैकमेन (F.F. Backmann, 1905) ने सीमाकारी नियम प्रस्तुत किया। जिसके आधार पर ''जब किसी प्रक्रिया की तीव्रता कुछ कारकों द्वारा प्रतिबंधित होती है,तब प्रक्रिया की दर न्यूनकारी कारक द्वारा सीमित होती है''। जब की पर्याप्त आपूर्ति के साथ गर्मियों के दिनों (मैदानी स्थितियों में) CO_2 प्रकाशसंश्लेषण में सीमाकारी कारक होती है।

ब्लैकमेन का न्यूनकारी कारक नियम लीबिग (Liebig) के न्यूनतम कारक नियम का रूपांतरित रूप है। इस नियम के अनुसार जब कोई क्रिया अनेक कारकों द्वारा नियंत्रित होती है, तो उस क्रिया की दर सबसे कम मात्रा वाले कारक द्वारा नियंत्रित की जाती है। तीन कार्डिनल बिन्दु का सिद्धान्त सैच (Sachs, 1860) द्वारा दिया गया था। इस परिकल्पना के अनुसार प्रत्येक कारक के लिए एक न्यूनतम (Minimum), अनुकूलन (optimum) तथा अधिकतम (maximum) बिन्दु होता है। प्रत्येक कारक के लिए एक न्यूनतम मान जिस पर प्रकाशसंश्लेषण प्रारम्भ होता है, एक अनुकुलतम मान जिस पर प्रकाशसंश्लेषण दर उच्च तथा एक अधिकतम मान जिस पर प्रकाशसंश्लेषण नहीं होता, होता है।

कारक (Factors) : प्रकाश संश्लेषी प्रक्रिया की दर कई आंतरिक तथा बाह्य कारकों (वातावरण) द्वारा प्रभावित होती है।

बाह्य कारक (External factor)

(1) प्रकाश (Light) : पृथ्वी पर पहुँचने वाली ऊर्जा का लगभग 2% प्रकाशसंश्लेषण में तथा लगभग 10% उपापचयी क्रियाओं में प्रयुक्त होता है।

(i) प्रकाश की तीव्रता (Light intensity) : एक सम्पूर्ण पौधे में, अत्यधिक उच्च प्रकाश तीव्रता जिस पर सौरीकरण (solarization) होता है, के अतिरिक्त प्रकाश की तीव्रता के साथ साथ प्रकाशसंश्लेषण की दर भी बढ़ती जाती है। सौलराइजेशन के क्लोरोफिल सहित सभी कोशिकीय संघटकों का प्रकाशीय ऑक्सीकरण हो जाता है।

ये रन्ध्रो के खुलने तथा बंद होने पर प्रभावित करके गैसीय विनिमय को भी प्रभावित करता है। प्रकाश की संतृप्तता का वह मान, जिस पर CO_2 के अर्न्तग्रहण को बढाकर भी दर में वृद्धि नहीं होती, प्रकाश संतृप्त बिन्दु (Light saturation point) कहलाता है।

(ii) प्रकाश की गुणवत्ता (Light quality) : प्रकाश संश्लेषी वर्णक विकिरणों के दृश्य भाग (अर्थात 380mμ से 760mμ) को अवशोषित करते है। सामान्यतः पौधे लाल तथा नीले प्रकाश में उच्च प्रकाशसंश्लेषण दर प्रदर्शित करते हैं। अधिकतम प्रकाशसंश्लेषण लाल प्रकाश तथा उसके पश्चात नीले प्रकाश में अवलोकित किया गया है। हरे प्रकार में न्यूनतम प्रभाव होता है। अन्य रूप से लाल शैवाले हरे प्रकाश में तथा भूरी शैवाले नीले प्रकाश में अधिकतम प्रकाशसंश्लेषण प्रदर्शित करती है।

(iii) प्रकाश का समयकाल (Duration of light)

(2) ताप (Temperature) : प्रकाशसंश्लेषण के लिए अनुकूलन ताप 20 से 35^{0}C होता है।

(3) कार्बन डाइऑक्साइड (Carbon dioxide) : वायुमण्डल में उपस्थित कार्बन डाइऑक्साइड का प्रतिशत कुल आयतन का लगभग 0.032% होता है।

जब प्रकाश तथा ताप सीमाकारी कारक न हो तब प्रयोगशाला उपस्थितियों में CO_2 की मात्रा बढ़ा देने पर, प्रकाशसंश्लेषण की दर बढ जाती है। यह बढाव 1% CO_2 सांद्रता तक होता है। उसी समय अत्यधिक CO_2 की सांद्रता पौधों के लिए विषाक्त होती है तथा प्रकाशसंश्लेषण को संदमित करती है।

(4) जल (Water) : जल प्रकाशसंश्लेषण के लिए आवश्यक कच्चा पदार्थ है।

(5) ऑक्सीजन (Oxygen) : ऑक्सीजन की अधिकता प्रक्रिया के लिए संदमक होती है। ऑक्सीजन की अधिक आपूर्ति श्वसन की दर बढाता है और समान रूप से प्रकाशसंश्लेषण की दर को सामान्य मध्यवर्ती पदार्थो द्वारा कम करती है। O_2 प्रकाशसंश्लेषण के लिए सीमाकारी कारक नहीं होती है। ऑक्सीजन की सांद्रता में किसी भी प्रकार की वृद्धि प्रकाश–संश्लेषण को घटाती है। इस घटना को वारबर्ग प्रभाव (इसे जर्मन वैज्ञानिक वारबर्ग (Warburg, 1920) ने क्लोरेला शैवाल में देखा) कहते है।

(6) प्रदूषक तथा संदमक (Pollutants and inhibitors) : धुँए में उपस्थित नाइट्रोजन तथा हाइड्रोकार्बन के ऑक्साइड क्रिया करके परऑक्सीएसीटाइल नाइट्रेट (PAN) तथा ओजोन का निर्माण करते है। PAN हिल अभिक्रिया कां संदमित करता है। डाइक्वेट (Diquat) तथा पेराक्वेट (Paraquat) (सामान्यतः वायलोजन कहलाते हैं) PS II में Q तथा PQ के मध्य इलेक्ट्रॉनों के स्थानांतरण को अवरूद्ध कर देते हैं

Aadhar Institute iguruji

प्रकाश संश्लेषण के अन्य संदमक मोनोयूरोन या CMU (क्लोरोफिनाइल डाइमिथाइल यूरिया), ब्रोमोसिल तथा एट्राजाइन इत्यादि, जिनकी क्रिया वायलोजन के समान होती है। प्रकाश की कम तीव्रता पर पौटेशियम सायनाइड का कोई संदमक प्रभाव नहीं होता ।

(7) खनिज (Minerals) : Mn^{++} तथा Cl^{-} की उपस्थिति प्रकाशीय अभिक्रिया (जल के प्रकाश अपघटन/ऑक्सीजन के निष्कासन) को सुचारू रूप से चलाने के लिए आवश्यक होती है। Mg^{++}, Cu^{++} तथा Fe^{++} आयन क्लोरोफिल के संश्लेषण के लिए महत्वपूर्ण होते है।

Comparison of C_3 and C_4 plants.

	C3 plants	**C4 plants**	
Representative species	Most crop plants, e.g. cereals, tobacco, beans	Maize, sugarcane	
Light intensity for maximum rate of photosynthesis	10000-30000 foot candles	Not saturated at 105 lux	
Effect of temperature rise from 25ºC to 35ºC	No change in rate or lower rate	50% greater at 35ºC	
Point at which no more CO2 can be taken up	40-60 ppm CO_2	Around zero ppm CO_2	
Water loss per g dry mass produced	450-950	250-350	
Carbon dioxide fixation	Occurs once	Occurs twice, first in mesophyll cells, then in bundle sheath cells	
		Merophyll cells	Bundle shealth cells
Carbon dioxide acceptor	RuBP, a 5C compound	PEP, a 3C compound	RuBP
Carbon dioxide fixing enzyme	RuBP caboxylase, which is inefficient	PEP carboxylase which is very efficient	RuBP caboxylase, working efficiently because carbon dioxide concentration is high
First product of photosynthesis	A C3 acid, GP	A C4 acid, e.g. oxaloacetate	
Leaf anatomy	Only one type of chloroplast	'Kranz' anatomy, i.e. two types of cell, each with its own type of chloroplast	
Efficiency	Less efficient photo-synthesis than C4 plants. Yields usually much lower.	More efficient photosynthesis than C3 plants but use more energy. Yields usually much higher.	

No. Trait	C3	C4	CAM
1. Taxonomic range	Very wide, algae to higher plants	No algae, or lower vascular plants; wide among herbaceous plants	Some species in about 26 families Welwitschia
2 Habitat preference 3 .Leaf anatomy	None in particular Festucoid, palisade layer present, bundle sheath cells not differentiated	Open and warm Kranz, palisade layer absent, bundle sheath cells present with chloroplasts	Open and warm, also saline Mesophyll not differentiated, big cells with large vacuoles
4 Photosynthetic light saturation	3000-6000 ft -C	None of above 8000 ft-°C	Between C3 and C4
5 Optimum temperature for photosynthesis	10-25	30-45°C	30-45 °C
6 CO2 compensation point	30-70 ppm	Less than 10 ppm	0-200 ppm
7 Stomatal behaviour	Open in day time and closed in night	Open in day time and closed in night	Closed in day and open in night time
8 Carboxylating enzyeme	RuBP carboxylase	PEP carboxylase in mesophyll and RuBP carboxylase in bundle sheath cells	PEP carboxylase in night and RuBP carboxylase in day time
9 CO_2 acceptor	RuBP	PEP in mesophyll and RuBP IN bundle sheath cells	PEP, night and RuBP in day time
10 First stable product of photosynthesis	PGA (a C3 acid)	Malate, Aspartate(C4 acids)	Malate
11. 13C/12C ratio	High	Low	Low
12. Pathway separation	None	Spatial (mesophyll/bundle)	Temporal (nigh/day)
13. Phtorespiration	High	None or very low	Low
14. Maximum photosynthetic rate (mg/dm2/hr)	15-35	40-80	1-4
15. Maximum growth rate (g/dm2/day)	0.5-2.0	3-5	0.01-0.02
16. Water efficiency (g H2O/g dry weight)	450-950	250-350	50-55

Aadhar Institute jaipur

Aadhar Institute, 27, kisaan Marg, Tonk Road, Jaipur Phone: 9314503070
in case of any doubt WhatsApp us at 9314503070

Respiration : Aerobic and anaerobic respiration, Kreb's cycle, Fermentation

श्वसन तथा दहन में अंतर : लेवोजियर (Lavosier) के अनुसार कोशिकीय श्वसन, दहन (कोयला, लकड़ी तेल आदि का जलना) के समान होता है। इन दोनों में जटिल कार्बनिक यौगिक ऑक्सीजन की उपस्थिति में टूटते हैं, जिससे कार्बन डाईऑक्साइड तथा ऊर्जा का उत्पादन होता है किन्तु इन दोनों क्रियाओं में कुछ आधारभूत अंतर भी हैं।

सारणी : श्वसन तथा दहन में अन्तर

क्र.स.	गुण	कोशिकीय श्वसन	दहन
1	क्रिया का स्वभाव	यह जैवरासायनिक एवं चरणबद्ध प्रक्रिया है।	यह भौतिक–रासायनिक एवं स्वतः क्रिया है।
2	प्राप्ति स्थल	कोशिकाओं के अंदर होती है।	अकोशिकीय है।
3	नियंत्रण	जैव नियंत्रित होती है।	अनियंत्रित होती है।
4	मुक्त ऊर्जा	ऊर्जा चरणों में मुक्त होती है।	एक समय पर बड़ी मात्रा में ऊर्जा निकलती है।
5	तापक्रम	सीमित रहता है।	बहुत अधिक होता है।
6	प्रकाश	प्रकाश उत्पन्न नहीं होता है।	प्रकाश उत्पन्न हो सकता है।
7	एंजाइम	एंजाइम्स द्वारा नियंत्रित होता है।	इंजाइम्स द्वारा नियंत्रित नहीं होता है।
8	मध्यवर्ती पदार्थ	बड़ी संख्या में मध्यवर्ती पदार्थ उत्पन्न होते है।	मध्यवर्ती पदार्थ उत्पन्न नहीं होते है।

श्वसनीय पदार्थ या ईंधन (Respiratory substrate of Fuel)

श्वसन में कई प्रकार के उच्च ऊर्जा युक्त यौगिक ऑक्सीकृत होते हैं। इन्हें **श्वसनीय पदार्थ या श्वसनीय ईंधन** कहते है। इनमें कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन को सम्मिलित किया जाता है।

(1) **कार्बोहाइड्रेट** (Carbohydrate) : यह मुख्य पदार्थ है जैसे – ग्लूकोज, फ्रक्टोज (हेक्सोज), सुक्रोज (डाईसैकेराइड) या स्टार्च, इन्सुलिन, हेमीसेल्युलोज (पॉलीसैकेराइड) आदि। वसन के दौरान सर्वप्रथम ग्लूकोज ऑक्सीकृत होता है क्योंकि यह बहुत अधिक ऊर्जा युक्त होता है। स्तनियों के मस्तिष्क की कोशिकाएँ श्वसनीय पदार्थ के रूप में केवल ग्लूकोज का ही उपयोग करती हैं। श्वसनीय पदार्थो के रूप में उपयोग होने से पहले जटिल कार्बोहाइड्रेट हेक्सोज शर्कराओं (Hexoses sugars) में जलअपघटित (Hydrolysed) हो जाते है। एक ग्राम कार्बोहाइड्रेट में 4.4 किलो कैलोरी या 18.4 kJ ऊर्जा उपस्थित होती है।

(2) **वसा** (Fats) : कुछ परिस्थितियों (मुख्यतः जब संचित कार्बोहाइड्रेट समाप्त हो जाते हैं) में वसा भी ऑक्सीकृत होते हैं। वसा लाइपेज एंजाइम द्वारा वसीय अम्ल तथा ग्लिसरॉल में जलअपघटन के बाद श्वसनीय पदार्थ के रूप में उपयोग किये जाते हैं, आगे इनका परिवर्तन हेक्सोज शर्कराओं में होता है। एक ग्राम वसा में 9.8 किलो कैलोरी या 41 kJ ऊर्जा उपस्थित होती है जो अन्य पदार्थो की तुलना में अधिकतम होती है।

वह श्वसन जिसमें कार्बोहाइड्रेट तथा वसा का श्वसनीय पदार्थो के रूप में उपयोग किया जाता है उसे प्लावी (फ्लोटिंव) श्वसन (ब्लैकमैन द्वारा दिया गया) कहते हैं।

(3) **प्रोटीन** (Protein) : कार्बोहाइड्रेट तथा वसा की अनुपस्थिति में प्रोटीन का उपयोग भी श्वसनीय पदार्थ के रूप में किया जाता है। एक ग्राम प्रोटीन में 4.8 किलो कैलोरी या 20 kJ ऊर्जा उपस्थित होती है। जब प्रोटीन का उपयोग श्वसनीय पदार्थ के रूप में किया जाता है, तब इसे प्रोटोप्लाज्मिक श्वसन कहते हैं।

श्वसन गुणांक (Respiration quotient)

निश्चित समय में निश्चित भार के श्वसनाधार द्वारा मुक्त CO_2 एवं प्रयुक्त O_2 के आयतन के अनुपात को श्वसन गुणांक (respiration quotient, RQ) कहते हैं।

$$RQ = \frac{\text{मुक्त } CO_2 \text{ का आयतन}}{\text{प्रयुक्त } O_2 \text{ का आयतन}} \rightarrow$$

श्वसन गुणांक का मान श्वसन में प्रयुक्त श्वसनाधार की रासायनिक प्रकृति पर निर्भर करता है। इसे गेनोग्स रेस्पाइरोमीटर (Ganong's respirometer) के द्वारा नापा जा सकता है। श्वसन गुणांक के मान से हमें श्वसनाधार एवं श्वसन के प्रकार का ज्ञान हो सकता है।

Aadhar Institute Jaipur

जब कार्बोहाइडेट का पूर्ण आक्सीकरण होता है तो श्वसन गुणांक का मान इकाई (unit = 1) होता है। परन्तु जब श्वसना र वसा एवं प्रोटीन होते हैं तो श्वसन गुणांक का मान इकाई से कम (0.5 से 0.9) होता है। जब श्वसनाधार कार्बनिक अम्ल होते हैं तब श्वसन गुणांक का मान इकाई से अधिक (1.3 से 4.0) होता है। रसदार पादपों में जैसे नागफनी (Opuntia). ब्रायोफिलम (Bryophyllum) में कार्बोहाइड्रेट का ऑक्सीकरण अपूर्ण होता है, CO_2 मुक्त नहीं होती तो इनका श्वसन गुणांक शून्य होता है।

श्वसन गुणांकों (RQ) का वर्गीकरण (Classification of R Q values)

1. कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrate)- RQ का मान एक (1) होता है जब कार्बोहाइड्रेट पूर्ण रूप से विघटित हो जाते हैं।

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6CO_2 + 6H_2O + E$$

$$RQ = \frac{6CO_2}{6O_2} = 1$$

उपरोक्त क्रिया सामान्य रूप से श्वसनरत पादप कोशिकाओं में पायी जाती है।

2. वसा (Fats) - वसा एवं प्रोटीन्स में कार्बोहाइड्रेट की तुलना में कम आक्सीजन होती है। इसलिए इनके पूर्ण विघटन में अधिक मात्रा में आक्सीजन प्रयुक्त होती हैं। इस कारण इनके RQ के मान भी एक से कम होते हैं।

$$C_{57}H_{104}O_6 + 80O_2 \rightarrow 57CO_2 + 52H_2O + E$$

ट्राइओलिन (Triolein)

$$RQ = \frac{57CO_2}{80O_2} = 0.71$$

$$2C_{51}H_{98}O_6 + 145O_2 \longrightarrow 102CO_2 + 98H_2O + E$$

ट्राइपाल्मिटिन (Tripalmitin)

$$RQ = \frac{102CO_2}{145O_2} = 0.70$$

सामान्यतः वसा के RQ मान 0.7 एवं प्रोटीन के RQ मान 0.5 होते हैं।

3. कार्बनिक अम्ल (Organic acids)- कुछ पादप विशेष परिस्थितियों में कार्बनिक अम्लों को श्वसन आधार के रूप में प्रयुक्त करते हैं। कार्बनिक अम्लों में कार्बोहाइड्रेट की तुलना में O_2 अधिक होती है। अतः इनके पूर्ण आक्सीकरण में कम आक्सीजन प्रयुक्त होती है। यही कारण है कि कार्बनिक अम्लों युक्त पादपों में RQ का मान एक से अधिक होते हैं।

$$2C_2H_2O_4 + O_2 \longrightarrow 4CO_2 + 2H_2O + E$$

अक्जेलिक अम्ल (Oxalic acid)

$$RQ = \frac{4CO_2}{1O_2} = 4$$

$$2C_4H_6O_6 + 5O_2 \longrightarrow 8CO_2 + 6H_2O + E$$

टार्टरिक अम्ल (Tartaric acid)

$$RQ = \frac{8CO_2}{5O_2} = 1.6$$

$$C_4H_6O_5 + 3O_2 \longrightarrow 4CO_2 + 3H_2O + E$$

मैलिक अम्ल (Malic acid)

$$RQ = \frac{4CO_2}{3O_2} = 1.3$$

$$2C_4H_6O_4 + 7O_2 \longrightarrow 8CO_2 + 6H_2O + E$$

सक्सिनिक अम्ल (Succinic acid)

$$RQ = \frac{8CO_2}{7O_2} = 1.1$$

Aadhar Institute, 27, kisaan Marg, Tonk Road, Jaipur Phone: 9314503070
in case of any doubt WhatsApp us at 9314503070

4. बीजों का अंकुरण (Germination of seeds) - अंकुरण के समय वसा कार्बोहाइड्रेट में परिवर्तित होती है जिससे अधिक मात्रा में आक्सीजन प्रयुक्त होती है। इस स्थिति में RQ का मान वास्तविक मान से कम होता है।

5. फलों का परिपक्वन (Ripening of fruits) - कोशिका की उपापचयी अभिक्रियाओं में कभी-कभी अधिक मात्रा में आक्सीजन मुक्त होती है। इसलिए यहाँ कम मात्रा में वातावरणीय आक्सीजन प्रयुक्त होती है। यह स्थिति फलों के · परिपक्वन के समय प्रस्तुत होती है जब कार्बोहाइड्रेट वसा में परिवर्तित होते हैं।

$$19C_6H_{12}O_6 \longrightarrow 2C_{57}H_{104}O_6 + 10H_2O + 46O_2$$

ग्लूकोज (Glucose) ट्रायोलिन (Triolien)

उपरोक्त स्थिति में RO का मान वास्तविक मान से अधिक होता है। यदि वातावरणीय आक्सीजन प्रयुक्त नहीं होती एवं मुक्त आक्सीजन पूर्ण रूप से प्रयुक्त हो जाती है तब इस स्थिति में RQ का मान अनंत (infinite) होता है।

6. अवायवीय श्वसन (Anaerobic respiration)-अवायवीय श्वसन में मुख्यतः CO_2 मुक्त होती है तथा O_2 प्रयुक्त नहीं | होती। यहाँ RQ का मान अनंत (infinite) होता है।

$$C_6H_{12}O_6 \longrightarrow 2C_2H_5OH + 2CO_2 + E$$

$$RQ = \frac{2CO_2}{O_2} = \infty$$

7. केसुलेसीयन पादप (Crssulacean plants)- इन पादपों में रात्री के समय श्वसन में कार्बोहाइड्रेटस के विघटन से | कार्बनिक अम्ल बनते हैं। यहाँ O_2 प्रयुक्त होती है परन्तु CO_2 मुक्त नहीं होती। इसलिए RQ का मान शून्य होता है

$$2C_6H_{12}O_6 + 3O_2 \longrightarrow 3C_4H_6O_5 + 2H_2O + E$$

ग्लूकोज (Glucose) मैलिक अम्ल (Malic acid)

$$RQ = \frac{CO_2}{3Q_2} = \text{शून्य}$$

श्वसन को प्रभावित करने वाले कारक (Factors effecting respiration)

1. आक्सीजन (Oxygen) आक्सीकरण के लिए आक्सीजन की आवश्यकता होती है। इसकी अनुपस्थिति में अवायवीय श्वसन/किण्वन होता है। आक्सीकरण वह निम्न मात्रा जो कि अवायवीय श्वसन के लिए आवश्यक होती है उसे विलोपन बिन्दु (extinction point) कहते हैं। यह ज्यादातर 2-10% होती है। आक्सीजन की कम मात्रा में एक स्थिति आती है जब वायवीय श्वसन एवं अवायवीय श्वसन दोनों ही सम्पन्न होते हें इस समय काल को संक्रमण काल (transitional period) कहते हैं। इस समय RQ का मान बढ़ जाता है तथा अवायवीय श्वसन में यह अनंत (infinite) हो जाता है।

संक्रमण काल (transitional period) के समय एक स्थिति पर वायवीय श्वसन निम्न एवं अवायवीय श्वसन अनुपस्थित होता है। इस समय कार्बनिक पदार्थों का विघटन एवं मुक्त CO_2 कम हो जाती है। इसे पाश्चर प्रभाव (Pasteur effect) कहते हैं | O_2 की सान्द्रता 5% से 25-30% तक बढ़ाने पर श्वसन दर बढ़ जाती है।

2. कार्बन डाईआक्साइड (Carbon dioxide)

कार्बन डाइआक्साइड की सान्द्रता बढ़ने पर श्वसन दर कम हो जाती है। CO_2 की अधिक मात्रा में रन्ध्र (stomata) बन्द हो जाते हैं जिससे कि CO_2 का विसरण कम होता है। यही कारण है कि श्वसन अंगों में विषाक्ता उत्पन्न हो जाती है।

3. प्रकाश (Light)

- प्रकाश की तीव्रता (intensity) अधिक होने पर प्रकाश संश्लेषी तथा अप्रकाश संश्लषी ऊतकों में श्वसन दर बढ़ जाती है। कार्बनिक पदार्थों का अधिक निर्माण अथवा संकुल (complex) पॉलीसेकेराइड का सरल घुलनशील शर्कराओं में परिवर्तन अथवा अधिक रन्ध्रों के खुलने से अधिक गैस विनिमय अथवा तापमान के बढ़ने से श्वसन दर प्रभावित होती है।
- **लेक्टुका सटाइवा (Lactuca sativa) में श्वसन दर प्रकाश की गुणवत्ता (quality) से प्रभावित होती है। बीज अंकुरण के समय लाल प्रकाश से श्वसन में वृद्धि एवं नीले प्रकाश से श्वसन घटता है।**

इलेक्ट्रॉन स्पिन अनुनाद (ESR) स्पेक्ट्रोस्कोपी:-

- इलेक्ट्रॉन पैरामैग्नेटिक रेजोनेंस (EPR) या इलेक्ट्रॉन स्पिन रेजोनेंस (ESR) स्पेक्ट्रोस्कोपी उन रासायनिक प्रजातियों का अध्ययन करने की एक तकनीक है जिनमें एक या अधिक अयुग्मित इलेक्ट्रॉन होते हैं, जैसे कि कार्बनिक और अकार्बनिक मुक्त कण या संक्रमण धातु आयन वाले अकार्बनिक कॉम्प्लेक्स।
- EPR की बेसिक भौतिक अवधारणाएं नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद (NMR) के अनुरूप हैं, लेकिन यह परमाणु नुक्लेइ के स्पिन के बजाय इलेक्ट्रॉन स्पिन है जो उत्साहित हैं।

क्योंकि अधिकांश स्थिर अणुओं में उनके सभी इलेक्ट्रॉन युग्मित होते हैं, EPR तकनीक NMR की तुलना में कम व्यापक रूप से उपयोग की जाती है। हालाँकि, पैरामैग्नेटिक प्रजातियों की इस सीमा का मतलब यह भी है कि EPR तकनीक बड़ी विशिष्टता में से एक है, क्योंकि सामान्य रासायनिक सॉल्वैंट्स और मैट्रिसेस EPR स्पेक्ट्रा को जन्म नहीं देते हैं।

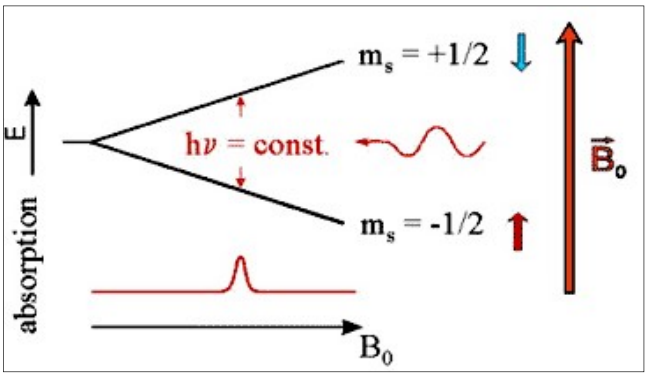

ESR स्पेक्ट्रा की उत्पत्ति और गुण

- एक इलेक्ट्रॉन में एक स्पिन चुंबकीय क्षण भी होता है जो अंतरिक्ष में दो अभिविन्यास ग्रहण कर सकता है और इस प्रकार उसे नुक्लेइ के लिए वर्णित तरीके से चुंबकीय क्षेत्र के साथ अंतः क्रिया करनी चाहिए।
- अधिकांश रासायनिक यौगिकों में, इलेक्ट्रॉनों को जोड़ा जाता है ताकि शुद्ध चुंबकीय क्षण शून्य हो और विकिरण के अवशोषण के लिए अनुनाद की कोई स्थिति न हो।

हालाँकि, ऐसे पदार्थ उपस्थित हैं जिनमें एक अयुग्मित इलेक्ट्रॉन होता है - उदाहरण के लिए, मुक्त कण, संक्रमण तत्वों के कुछ आयन, त्रिक अवस्था में उत्तेजित फोटोकेमिकल मध्यवर्ती, और O_2 जैसे अणु जिनमें त्रिक ग्राउंड अवस्था होती है। ऐसे पदार्थों को पैरामैग्नेटिक कहा जाता है और कई पदार्थों का पता इलेक्ट्रॉन स्पिन अनुनाद (ESR) स्पेक्ट्रोस्कोपी द्वारा लगाया जा सकता है।
(कुछ संदर्भों में तकनीक को इलेक्ट्रॉन पैरामैग्नेटिक अनुनाद या EPR स्पेक्ट्रोस्कोपी कहा जाता है)।

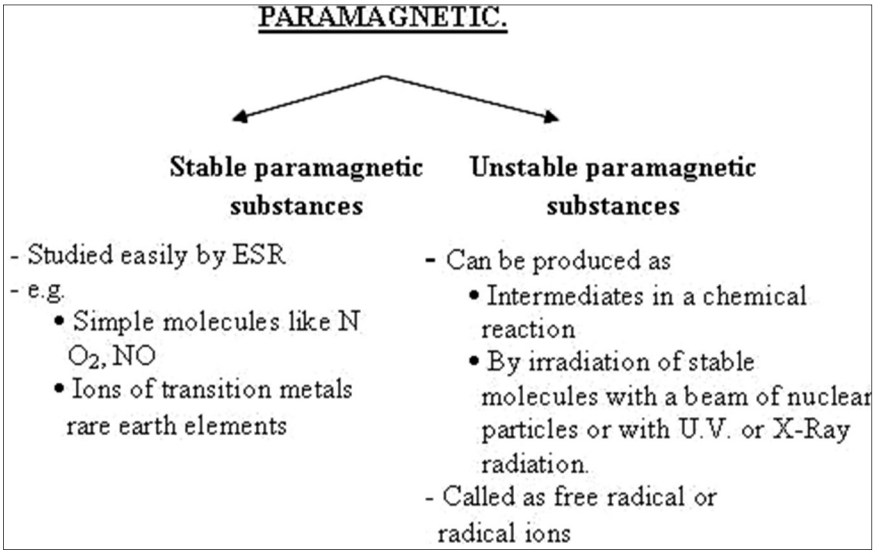

CHAPTER: MASS SPECTROSCOPY

- मास स्पेक्ट्रम अनिवार्य रूप से मास स्पेक्ट्रोमेट्रिक प्रयोग के दौरान उत्पादित और एकत्र किए गए आयनों की थर्मोडायनामिक स्थिरता पर निर्भर है।
- ऐसी स्थिरता अनिवार्य रूप से प्रयोग के दौरान प्रचलित स्थितियों पर निर्भर करती है।
- विभिन्न रासायनिक संरचनाओं की पहचान करने के लिए मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग करने के लिए उस प्रकार का प्रयोग करना आवश्यक है जो आणविक इकाई को विघटित करने और खंडित आयनों का उत्पादन करने का कारण बनता है, जिनमें से प्रत्येक को परिणामी स्पेक्ट्रम में एक शिखर (पीक) द्वारा दर्शाया जाता है।

मास स्पेक्ट्रोमीटर

घटक: सभी मास स्पेक्ट्रोमीटर अनिवार्य रूप से तीन भागों से बने होते हैं:

(i) एक आयनीकरण चैंबर या स्रोत,
(ii) एक मास विश्लेषक और
(iii) एक डिटेक्टर।

- द्रव्यमान स्पेक्ट्रम प्राप्त करने के लिए आवश्यक आवश्यकताएं हैं गैस फेज में आयनों का उत्पादन करना, उन्हें विद्युत क्षेत्रों का उपयोग करके एक विशिष्ट वेग तक तेज करना, उन्हें एक उपयुक्त द्रव्यमान विश्लेषक में प्रक्षेपित करना, जो विभिन्न द्रव्यमानों की संस्थाओं को अलग करता है, और अंत में प्रत्येक का पता लगाना समय में क्रमिक रूप से किसी विशेष द्रव्यमान की आवेशित इकाई।
- धनात्मक और ऋणात्मक दोनों आयन द्रव्यमान स्पेक्ट्रोमेट्री की जा सकती है, लेकिन स्पष्ट रूप से एक ही समय में नहीं; किसी भी समय केवल एक प्रकार के आयन को स्रोत क्षेत्र से बाहर त्वरित किया जा सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि आयनीकरण प्रक्रिया में दोनों प्रकार के आयन एक साथ उत्पन्न हुए होंगे।
- बढ़ते हुए ऋणात्मक ग्रेडिएंट क्षेत्र या घटते हुए धनात्मक ग्रेडिएंट क्षेत्र में धनायनों में तेजी आएगी।
- यदि इलेक्ट्रॉनों का उपयोग आयनीकरण प्रक्रिया को प्रभावित करने के लिए किया जाता है, हालांकि, धनायन और आयन समान मात्रा में उत्पन्न नहीं होते हैं, क्योंकि धनायन बनाने के लिए एक नेचुरल अणु से एक इलेक्ट्रॉन को निकालना एक आयन बनाने के लिए इलेक्ट्रॉन कैप्चर की तुलना में बहुत अधिक कुशल प्रक्रिया है।

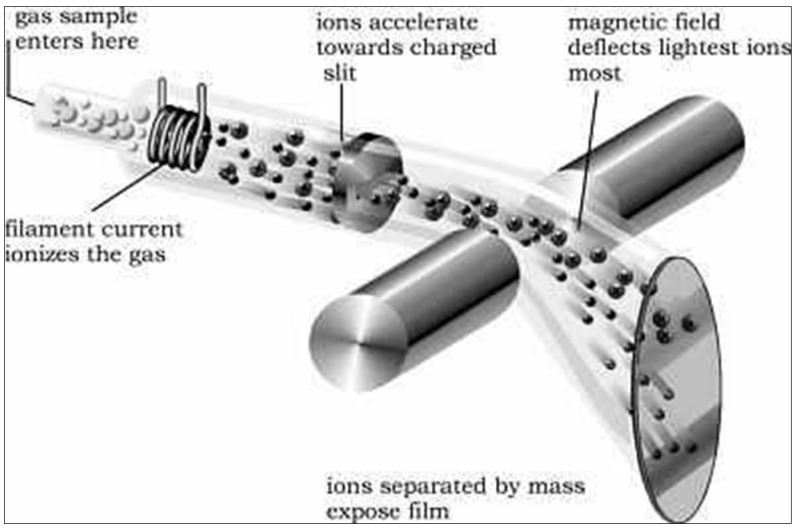

रासायनिक आयनीकरण: रासायनिक आयनीकरण (CI) अनिवार्य रूप से इलेक्ट्रॉन प्रभाव आयनीकरण (EI) स्रोत पर आधारित है लेकिन थोड़ा विखंडन (fragmentation) होता है, जिससे अधिक स्वच्छ स्पेक्ट्रा उत्पन्न होता है। इन गैसों के EI द्वारा आयनों की सामान्य पीढ़ी, $CH_4^{+\cdot}$ या $NH_3^{+\cdot}$ जैसी प्रजातियों को देगी। हालाँकि, स्रोत में अभिकर्मक गैसों के अपेक्षाकृत उच्च दबाव के कारण, आयन-आणविक प्रतिक्रियाओं की संभावना पैदा होती है। उदाहरण के लिए:

$$CH_4^{+\cdot} + CH_4 \rightarrow CH_5^{+} + CH_3, \text{ or,} \qquad NH_3^{+\cdot} + NH_3 \rightarrow NH_4^{+} + NH_2$$

इस प्रकार के आयनीकरण (ionisation) का उपयोग दवाओं और माध्यमिक मेटाबोलाइट्स के अध्ययन में व्यापक रूप से किया जाता है। यदि उपयुक्त अभिकर्मक गैस का चयन किया जाए तो ऋणात्मक रासायनिक आयनीकरण भी संभव है।

फ़ील्ड आयनीकरण (Ionisation) : फ़ील्ड आयनीकरण (FI) के लिए फिर से सैंपल को वाष्प अवस्था में लाने की आवश्यकता होती है। अणुओं को तीव्र विद्युत क्षेत्र या 10^7 से 10^8 V cm^{-1}के क्रम के अधीन किया जाता है।

ऐसी परिस्थितियों में बाहरी बंध इलेक्ट्रॉन बड़ी ताकतों के अधीन होते हैं और ऊर्जावान आयनीकरण क्षमता (ionisation potential) पर काबू पाने के लिए पर्याप्त होते हैं और एक आणविक रेडिकल धनायन उत्पन्न करने के लिए एक इलेक्ट्रॉन को हटा दिया जाता है।

- **आयन विशोषण विधियाँ:** विभिन्न उपकरणों का उपयोग करके EI स्रोत में ठोस सैंपल पेश (introduce) करना संभव है, जिनमें से सबसे आम प्रत्यक्ष सम्मिलन जांच (DIP) है।
- बेशक परीक्षण (under test) के तहत पदार्थ की एक आवश्यक संपत्ति यह है कि इलेक्ट्रॉन बीम में आयनीकरण (ionisation) से पहले, ठोस को वाष्पित होने के लिए पर्याप्त रूप से अस्थिर होना होगा (कम दबाव पर इस्तेमाल किया जाना चाहिए), या अधिक सख्ती से अस्थिर होना चाहिए।

अधिकांश जैविक सामग्रियों में यह गुण नहीं होता है, या, यदि होता है, तो वे नाजुक (fragile) या थर्मल रूप से टिकाऊ होते हैं।

लेज़र विशोषण आयनीकरण: लेज़र बीम (विद्युत चुम्बकीय विकिरण होने के कारण) को आसानी से समेटा और केंद्रित किया जा सकता है और एक उपयुक्त जांच सतह पर लेपित सैंपल से आयनीकरण (ionisation) और विशोषण (desorption) दोनों का कारण बनने के लिए पर्याप्त ऊर्जा उत्पन्न की जा सकती है। यह लेजर डिसोर्प्शन आयनीकरण को जन्म देता है।

या तो आयनों की एक सतत धारा उत्पन्न हो सकती है लेकिन लेजर द्वारा सतह की क्षति के कारण सैंपल अपेक्षाकृत कम समय तक जीवित रहता है, या लेजर को स्पंदित किया जा सकता है और TOF-MS. द्वारा अवशोषित आयनों का विश्लेषण किया जा सकता है। मैट्रिक्स-असिस्टेड लेजर डिसोर्प्शन आयनाइजेशन (MALDI) में एक मैट्रिक्स शामिल होता है जो ऊर्जा सिंक के रूप में कार्य करता है। जिसके परिणामस्वरूप सैंपल जीवन लम्बा हो जाता है।

- सैंपल को मैट्रिक्स के विलयन के साथ गहराई से मिलाया जाता है और एक उपयुक्त धातु स्लाइड पर रखा जाता है।
- सहक्रिस्टलीकरण तब होता है जब मिश्रण को ओवन में सुखाया जाता है। इस पद्धति में सबसे हालिया प्रगति में से एक सतह-संवर्धित लेजर डिसोर्प्शन आयनीकरण (SELDI) का विकास है जिसमें मैट्रिक्स स्थायी रूप से डिस्पोजेबल ग्लास-लेपित धातु स्लाइड की सतह से जुड़ा होता है।

भारतीय चंदन (Santalum album)

- यह सैंटालेसी फैमिली में शामिल है, और इसे आमतौर पर सफेद या पूर्वी भारतीय चंदन के रूप में जाना जाता है।
- भारतीय चंदन (Santalum album) का संसार में सर्वोच्च स्थान है। इसका आर्थिक महत्व भी है। यह पेड़ मुख्यत: कर्नाटक के जंगलों में मिलता है तथा भारत के अन्य भागों में भी कहीं-कहीं पाया जाता है।
- लकड़ी को उसके घने विशेषता के कारण नक्काशी में महत्व दिया जाता है।
- चंदन में ज्वरनाशक, एंटीसेप्टिक, एंटीस्केबिटिक और डाइयुरेटिक गुण होते हैं। यह ब्रोंकाइटिस, सिस्टिटिस, डिसुरिया और मूत्र पथ के रोगों के उपचार में भी प्रभावी है
- चंदन के तेल में गर्म, लकड़ी जैसी गंध होती है और इसका उपयोग आमतौर पर धूप, सौंदर्य प्रसाधन, इत्र और साबुन में सुगंध के रूप में किया जाता है।
- इसका उपयोग खाद्य पदार्थों और पेय पदार्थों के स्वाद के रूप में भी किया जाता है।
- लकड़ी को उसके घने विशेषता के कारण नक्काशी में महत्व दिया गया है।
- पारंपरिक चिकित्सा में, चंदन के तेल का उपयोग एंटीसेप्टिक और कसैले (astringent) के रूप में और सिरदर्द, पेट दर्द और मूत्र और जेनाइटल विकारों के इलाज के लिए किया जाता है। भारत में, चंदन के आवश्यक तेल, इमल्शन या पेस्ट का उपयोग सूजन और फटने वाली त्वचा रोगों के उपचार में किया जाता है।
- तेल का उपयोग पारंपरिक आयुर्वेदिक औषधीय प्रणाली में डाइयुरेटिक और हल्के उत्तेजक के रूप में और त्वचा को चिकना करने के लिए किया जाता रहा है।
- प्रारंभिक हवाईवासियों (Hawaiians) द्वारा पत्तियों और छाल का उपयोग रूसी, जूँ, त्वचा की सूजन और यौन संचारित रोगों के इलाज के लिए किया जाता था।
    - चंदन के तेल ने फसल के कीट टेट्रानाइकस यूर्टिका (दो-धब्बेदार मकड़ी घुन) के खिलाफ भी प्रतिरोधक क्षमता प्रदर्शित की है।

Terminela chebula हरीतकी

- हरीतकी (टर्मिनलिया चेबुला रेट्ज़., फैमिली : कॉम्ब्रेटेसी) का अत्यधिक चिकित्सीय महत्व है और यह भारत में 1500 m की ऊंचाई तक व्यापक रूप से वितरित है।
- Prevents Diabetes
- हरीतकी का उत्कृष्ट हाइपोग्लाइसेमिक गुण शरीर के ब्लड शुगर के स्तर को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस अद्भुत फल के सेवन से β-अग्न्याशय कोशिकाओं से इंसुलिन का उत्पादन सक्रिय हो जाता है।
- संज्ञानात्मक कार्यप्रणाली में सुधार करता है
- हरीतकी एक ऐसा पारंपरिक उपचार है जिसमें शक्तिशाली मस्तिष्क-वर्धक गुण हैं। इस हरड़ में मौजूद शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट और फ्लेवोनोइड व्यक्ति की मेमोरी क्षमता, फोकस, सांद्रता , शांति, सतर्कता में सुधार करते हैं।
- यौन स्वास्थ्य और सहनशक्ति (Stamina) को बढ़ाता है
- हरीतकी के असंख्य स्वास्थ्य लाभों में से एक महत्व यह है कि यह पुरुषों और महिलाओं दोनों के यौन स्वास्थ्य को बढ़ावा देने में बेहद फायदेमंद है।
- पाचन में सहायक

- हरीतकी आंत के स्वास्थ्य में सुधार और ग्रासनलीशोथ, सीने में जलन, दस्त, पेट फूलना, पेप्टिक अल्सर, गैस्ट्रोइसोफेगल रिफ्लक्स रोग, अपच, कब्ज, पेट फूलना और पेट दर्द जैसे कई गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल विकारों के इलाज के लिए एक पारंपरिक उपचार है।

Terminalia arjuna(arjuna,)

- टर्मिनलिया अर्जुन, जिसे आमतौर पर अर्जुन के नाम से जाना जाता है, कॉम्ब्रेटेसी फैमिली से संबंधित है।
- इसकी छाल के काढ़े (decoction) का उपयोग भारतीय उपमहाद्वीप में सदियों से प्राचीन चिकित्सकों की टिप्पणियों के आधार पर, एंजाइनल दर्द, हाइपरटेंशन , कंजेस्टिव हृदय विफलता और डिस्लिपिडेमिया के लिए किया जा रहा है।
- टर्मिनलिया अर्जुन, जिसे आमतौर पर अर्जुन के नाम से जाना जाता है, कॉम्ब्रेटेसी फैमिली से संबंधित है। इसकी छाल का काढ़ा (decoction) सदियों से प्राचीन चिकित्सकों की टिप्पणियों के आधार पर, भारतीय उपमहाद्वीप में एंजाइनल दर्द, हाइपरटेंशन , कंजेस्टिव हृदय विफलता और डिस्लिपिडेमिया के लिए उपयोग किया जा रहा है। यह भी माना जाता है कि इसमें लिवर , हिपेटिक , यौन और यौन रोगों को ठीक करने की क्षमता है। वायरल रोग
- अर्जुन पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में पाया जाता है, और आमतौर पर नदी के किनारे या सूखी नदी के तल के पास उगता हुआ पाया जाता है
- अर्जुन उन प्रजातियों में से एक है जिनकी पत्तियों को एंथेरिया पफिया कीट द्वारा खाया जाता है जो टसर रेशम का उत्पादन करता है, जो व्यावसायिक महत्व का जंगली रेशम है।
- होम्योपैथी में टर्मिनलिया अर्जुन मदर टिंचर Q
- यह फ़ॉर्मूला हृदय संबंधी स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद कर सकता है
- It strengthens the cardiac muscles and prevents illnesses
- It helps in regulating the heartbeat
- It can facilitate the healing process in case of injuries
- It helps in improving energy levels and reduces fatigue

Terminalia bellirica बहेड़ा का वृक्ष

Sanskrit: Vibhītaka बिभीतक, Aksha अक्ष

this is a large deciduous tree in the Combretaceae family

- प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रंथ, चरक संहिता में, बिभीतकी फलों का उल्लेख बीमारी को कम करने और दीर्घायु, बौद्धिक कौशल और शक्ति प्रदान करने वाले गुणों के रूप में किया गया है। चरक संहिता में वर्णित कई "रसायन" हैं, जो बिभीतकी का उपयोग करते हैं।
- फूल, छाल (bark), फल और बीज गिरी का उपयोग कब्ज से राहत देने, हृदय रोग का इलाज करने, आंखों के संक्रमण को ठीक करने, बालों को मजबूत करने, आवाज को खराब होने से बचाने और ब्लड की अनियमितताओं को दूर करने के साथ-साथ गले की खराश (throat) और खांसी से राहत देने के लिए दवाओं में किया जाता है। हालाँकि, बहुत अधिक मात्रा में सेवन करने से उल्टी और चक्कर आने की समस्या हो सकती है।

- **Flower:** प्लीहा वृद्धि, अत्यधिक मल त्याग और सीने में दर्द के लिए फूलों को उबालने से प्राप्त तरल पदार्थ लिया जाता है।
- **Bark:** पेस्ट बनाकर इसे विटिलिगो के उपचार के रूप में शीर्ष पर लगाया जाता है और एनीमिया के लिए मौखिक रूप से लिया जाता है। दांतों के दर्द और मसूड़ों की सूजन से राहत पाने के लिए छाल (bark) को उबालने से निकले तरल पदार्थ को मुंह में रखा जाता है।
- **Fruit:** सुखाकर खांसी और आंखों की बीमारियों के इलाज के लिए उपयोग किया जाता है। फलों के पेस्ट को आंखों के नीचे के घेरों पर लगाने से दर्द से राहत मिलती है।
- शहद और फल के छिलके का लेप मिलाकर चाटने से दमा और खांसी ठीक हो जाती है। नपुंसकता के लिए फल के चूर्ण को गन्ने की चीनी के साथ मिलाकर प्रतिदिन सेवन करने से नपुंसकता दूर होती है।
- फल को ताकत देने वाले टॉनिक के रूप में और बवासीर (hemorrhoids), सूजन, कुष्ठ रोग, दस्त, तेज पेट दर्द और सिरदर्द के इलाज के रूप में खाया जाता है।
- **Seed:** पेशाब में दर्द और किडनी की पथरी से राहत पाने के लिए बीज की गिरी से बने पेस्ट को शराब के साथ मिलाकर पीने से दर्द से राहत मिलती है। सूजन को कम करने और चोटों के कारण होने वाले दर्द से राहत पाने के लिए गर्म गिरी के पेस्ट को शीर्ष पर लगाया जाता है।
- भारत में छाल (bark) का उपयोग डाइयुरेटिक के रूप में किया जाता है; तेज बुखार, सर्दी-जुकाम, लू लगना, हैजा (दो अन्य प्रजातियों की छाल के साथ), सर्पदंश (एक अन्य प्रजाति की छाल के साथ) के लिए भी; रेसिन का उपयोग ऐंठन के लिए किया जाता है; गोंद शामक, परगेटिव और खुजली को शांत करने वाला है।
- फल का उपयोग कसैले, मस्तिष्क टॉनिक के रूप में, खसरा (दो अन्य प्रजातियों के पौधों के भागो के साथ), खांसी, अस्थमा, पेट और लिवर विकार, बवासीर, कुष्ठ रोग, जलोदर, बुखार के लिए किया जाता है; साथ ही, आधा पका फल विरेचक होता है, लेकिन पके फल में विपरीत गुण होता है।
- तेल का उपयोग आमवाती दर्द पर किया जाता है; फल का गूदा (शहद के साथ) नेत्ररोग पर प्रयोग किया जाता है; और बीजों का उपयोग गैस्ट्रिक समस्याओं के लिए किया जाता है।
- इंडो-चाइना में इस प्रजाति का उपयोग कसैले (astringent) और टॉनिक के रूप में, हरा होने पर नेक्रोटिक के रूप में और मादक पदार्थ (बड़ी मात्रा में) के रूप में किया जाता है।
- इंडोनेशिया में पके फल को बीज निकालकर भूनकर पाउडर बनाया जाता है, फिर अम्बिलिकल कॉर्ड गिरने के बाद नाभि (navel) की रक्षा के लिए उपयोग किया जाता है, यह महिलाओं की बीमारियों के इलाज के लिए एक जटिल दवा का भी भाग है।
- बहेड़ा के उपयोग व फायदे: हाथ-पैर की जलन में बहेड़े के बीज को पानी के साथ पीसकर लगाने से लाभ मिलता है। बहेड़े के पत्ते और चीनी का काढ़ा बनाकर पीने से कफ से निजात मिलती है। छाल का टुकड़ा मुंह में रखकर चूसते रहने से भी खांसी और बलगम से छुटकारा मिलता है। बहेड़े का छिलका और मिश्री युक्त पेय पीने से आंखों की रोशनी बढ़ जाती है बहेड़े के आधे पके हुए फल को पीसकर पानी के साथ सेवन करने से कब्ज से छुटकारा मिलता है। बहेड़े को थोड़े से घी में पकाकर खाने से गले के रोग दूर होते हैं। बहेड़ा के चूर्ण का लेप बनाकर बालों की जड़ों पर लगाने से असमय सफेद होना रुक जाता है।

Withania somnifera अश्वगंधा

- अश्वगंधा (विथानिया सोम्निफेरा) अश्वगंधा, एक बारहमासी झाड़ी, जिसे भारतीय जिनसेंग या शीतकालीन चेरी के रूप में भी जाना जाता है, और नाइटशेड फैमिली सोलानेसी से संबंधित है।
- इसका उपयोग हजारों वर्षों से पारंपरिक भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सा में दर्द और सूजन को कम करने, अनिद्रा का इलाज करने और पोषण को बढ़ावा देने के साथ-साथ अन्य स्थितियों के लिए किया जाता रहा है।
- यह आपके शरीर को तनाव को बेहतर ढंग से प्रबंधित करने में मदद करता है

- अश्वगंधा ने रुमेटीइड गठिया (rheumatoid arthritis) वाले लोगों में दर्द और जोड़ों की सूजन जैसे गठिया से संबंधित लक्षणों को कम किया। पशु अध्ययनों से पता चला है कि यह सूजन को शांत कर सकता है।
- अश्वगंधा कुछ प्रकार की तंत्रिका कोशिका क्षति को धीमा कर सकता है, रोक सकता है और संभवतः उलट सकता है। यही अल्जाइमर, पार्किंसंस और हंटिंगटन जैसी बीमारियों का कारण बनता है।
- व्यायाम प्रदर्शन:- 8 सप्ताह तक प्रतिदिन 500 मिलीग्राम अश्वगंधा का सेवन करने से प्लेसबो लेने वाले लोगों की तुलना में व्यायाम के दौरान अधिक गति और ताकत मिली। उन्होंने अधिक ऑक्सीजन लेते हुए बेहतर सांस ली।
- पुरुष बांझपन:- एक छोटे से अध्ययन में पाया गया कि जो बांझ पुरुष 90 दिनों तक प्रतिदिन 5 ग्राम अश्वगंधा का सेवन करते हैं, उनमें शुक्राणुओं की संख्या अधिक होती है। उनके शुक्राणुओं के स्वास्थ्य में भी सुधार हुआ।
- **यदि अकेले या डॉक्टरी दवाओं के साथ लिया जाए तो W. सोम्निफेरा प्रतिकूल प्रभाव पैदा कर सकता है।**
- **साइड इफेक्ट्स में दस्त, सिरदर्द, बेहोशी या मतली शामिल हो सकती है, और उत्पाद का उपयोग गर्भावस्था या स्तनपान के दौरान नहीं किया जाना चाहिए**

General characters and classification of Gymnosperms : their life-cycle and economic importance.

सामान्य लक्षण एवं बन्धुता (Gymnosperms : General Characters and Affinities)

- पैलियोजोइक महाकल्प (Palaeozoic era) में मध्यजीवी महाकल्प (Mesozoic era) के जुरसिक (Jurassic) तथा क्रिटेशस (Cretaceous) काल में पृथ्वी पर प्रमुख वनस्पति के रूप में उपस्थित थे।
- जिम्नोस्पर्म के अनेक आद्य समूह, जैसे साइकैडोफ़िलिकेलीज़ (Cycadofilicales), बेनीटाइटेलीज़ (Benettitales), कार्डेटेलीज़ (Cordaitales) गणों के सदस्य अब पृथ्वी से लुप्त (extinct) हो चुके हैं तथा इनके केवल परिरक्षित (preserved) अवशेष (अर्थात् जीवाश्म) ही मिलते है,
- जबकि शेष गणों **साइकैडेलीज़ (Cycadales), गिंगोएलीज़ (Ginkgoales), कोनीफेरेलीज़ (Coniferales) तथा नीटेलीज़ (Gnetales) गण के** सदस्य जीवित तथा जीवाश्म दोनों ही रूपों में मिलते हैं।

जिम्नोस्पर्म के लाक्षणिक गुण (Characteristics of Gymnosperms)

(1) अधिकांश जीवित जिम्नोस्पर्म सदाहरित वृक्ष (evergreen trees) अथवा क्षुप (shrubs) हैं। ये पौधे मरुद्भिदी अनुकूलन (xerophytic adaptation) दर्शाते हैं।

(2) ये पौधे बीजाणुद्भिदी (sporophytic) हैं तथा सुविकसित मूल, स्तम्भ व पत्तियों में विभेदित होते हैं।

(3) इनमें मूसला जड़ (tap roots) पायी जाती हैं। कुछ वंशों की जड़ें शैवाल (जैसे साइकैस) अथवा कवकों (जैसे पाइनस) से सहजीविता (symbosis) दर्शाती हैं।

(3) स्तम्भ ऊर्ध्व (erect), अधिकांशतः शाखित (साइकैस में अशाखित) तथा काष्ठीय (woody) होता है। कुछ जातियों में स्तम्भ कन्दिल (tuberous; जैसे जैमिया, Zamia) होता है।

(5) पर्ण-दाग़ (leaf scars) की उपस्थिति जिम्नोस्पर्म के स्तम्भ का एक विशेष लक्षण है।

(6) पत्तियाँ एक अथवा द्विरूपी (mono-or-dimorphic) होती हैं। सामान्य पत्तियाँ (foliage leaves) हरी, सरल, सूच्याकार (needle-shaped) अथवा पिच्छाकार संयुक्त (pinnately compound) होती हैं। शल्कीय पत्तियाँ (scaly leaves) प्रायः सूक्ष्म तथा पर्णपाती (deciduous) होती हैं। इफेडरा (Ephedra),आदि कुछ वंशों में केवल शल्कीय पत्तियाँ ही पायी जाती हैं।

(7) जड़ों में जाइलम द्वि-से बहुआदिदारूक (di-to-polyarch) तथा बहिरादिदारूक (exarch) होता है।

(8) स्तम्भ का कॉर्टेक्स (cortex) पैरेन्काइमी कोशिकाओं से बना होता है। कॉर्टेक्स की कुछ कोशिकाओं में स्टार्च कण (starch grains) अथवा टेनिन (tannin) पाया जाता है।

(9) प्राथमिक अवस्था में स्तम्भ में अनेक बहिःपोषवाही (collateral), अंतरादिदारूक (endarch) तथा वर्धी (open) संवहन पूल होते हैं।

(10) जाइलम केवल वाहिनिकाओं (tracheids) तथा जाइलम पैरेन्काइमा (xylem parenchyma) से निर्मित होता है**। नीटेलीज़ (Gnetales) गण को छोड़कर अन्य सभी गणों में जाइलम वाहिकायें (vessels) अनुपस्थित होती हैं।**

(11) फ्लोएम चालनी नलिकाओं (sieve tubes) तथा फ्लोएम पैरेन्काइमा (phloem parenchyma) से बना होता है। **नीटेलीज़ गण को छोड़कर शेष गणों में सहकोशिकाएँ (companion cells) नहीं पायी जाती हैं।**

Aadhar Institute iguruji

(12) इस समूह के सभी पौधों में द्वितीयक वृद्धि (secondary growth) होती है तथा सुस्पष्ट वार्षिक वलय (annual rings) बनते हैं। **परन्तु कुछ जिम्नोस्पर्म जैसे साइकैस (Cycas) में प्राथमिक कैम्बियम (primary cambium) अल्पकालिक होता है। इनमें द्वितीयक फ्लोएम के बाहर की ओर कैम्बियम के उत्तरोत्तर वलय (successive rings) बनते हैं।**

(13) द्वितीयक वृद्धि से बनी काष्ठ (wood) दो प्रकार की हो सकती है—

(i) विरलदारुक (manoxylic)- इस प्रकार की काष्ठ में पिथ व कॉर्टेक्स सुविकसित तथा मज्जा रश्मियाँ (medullary rays) चौड़ी होने के कारण काष्ठ संहत (compact) नहीं होती है, उदाहरण साइकैस (Cycas)। (ii) घनदारुक (pycnoxylic)— इनमें पिथ व कॉर्टेक्स अत्यधिक न्यनीकृत (reduced) होते हैं तथा मज्जा रश्मियाँ (medullary rays) अपेक्षाकृत कम होती हैं। अतः इस प्रकार की काष्ठ में जाइलम तत्व (xylem elements) सघन रूप से व्यवस्थित होते हैं। उदाहरणः पाइनस (Pinus)।

(14) पत्तियों की बाह्यत्वचा (epidermis) क्यूटिकल की मोटी परत से ढकी होती है। इसमें धंसे हुए रन्ध्र (sunken stomata) पाये जाते हैं।

(15) पर्ण मध्योतक (mesophyll), स्पंजी व पेलिसेड कोशिकाओं (spongy and palisade cells) में विभेदित (साइकैस) अथवा अविभेदित (पाइनस, सिस) होता है।

(16) अधिकांश जिम्नोस्पर्म की पत्तियों में पार्श्व शिराओं (lateral veins) का अभाव होता है। इनमें पोषक पदार्थो का पार्श्व स्थानांतरण (lateral translocation) संचरण ऊतक (transfusion tissue) द्वारा होता है।

(17) इस समूह के पौधे विषमबीजाणुक (heterosporous) हैं। गुरु एवं लघु बीजाणुधानियाँ (mega-and microsporangia) क्रमशः गुरु व लघुबीजाणुपों (mega-and microsporophylls) पर पायी जाती हैं, जो सघन शंकु (cone) अथवा स्ट्रोबाइलस (strobilus) बनाते हैं। **(साइकैस के गुरुबीजाणुपर्ण सघन शंकु नहीं बनाते हैं।**

(18) **सामान्यतः शंकु एकबीजाणुधानीय (monosporangiate), अर्थात् एकलिंगी (unisexual) होते हैं,** परन्तु कुछ जातियों जैसे इफ़ेडरा फोलिएटा (Ephedra foliata), इ० इन्टरमीडिया (E. intermedia), आदि में द्विबीजाणुधानीय शंकु (bisporangiate cone) भी पाये गये हैं।

(19) लघुबीजाणुपर्णों (microsporophylls) से निर्मित शंकु, नर शंकु (male cone) कहलाते हैं। ये प्रायः अल्पकालिक होते हैं। लघुबीजाणुधानियाँ (microsporangia) इन बीजाणुपर्णों की अपाक्ष (abaxial, निचली) सतह पर उपस्थित होती हैं। विभिन्न वंशों में (प्रत्येक बीजाणुपर्ण में) बीजाणुधानियों की संख्या अनिश्चित (साइकैस) अथवा सीमित (पाइनस में केवल दो) होती है। बीजाणुधानियों का विकास यूस्पोरेन्जिएट (eusporangiate) प्रकार का होता है।

(20) गुरुबीजाणुपर्णो (megasporophylls) से निर्मित शंकु, स्त्री शंकु (female cone) कहलाते हैं। ये पौधे पर प्रायः अनेक वर्षों तक लगे रहते हैं।

(21) गुरुबीजाणुपर्णों की संरचना सामान्य पर्णों जैसी (साइकैस) अथवा काष्ठीय (cauline; जैसे पाइनस) होती है।

(22) गुरुबीजाणुधानियाँ (megasporangium) अथवा बीजाण्ड (ovule) बीजाणुपर्णों पर नग्न (naked) पाये जाते हैं।

(23) बीजाण्ड ऋजु (orthotropous) तथा केवल एकअध्यावरणी (unitegmic) होते हैं, परन्तु नीटेलीज़ (Gnetales) गण के सदस्यों में बीजाण्ड द्विअध्यावरणी (bitegmic) होते हैं।

(24) **अध्यावरण (integument) प्रायः तीन परतों (layers) में विभेदित होता है, जिनमें से बाहरी तथा अन्तः परतें मॉसल (fleshy) तथा मध्य परत अष्ठिल (stony) होती हैं।**

Aadhar Institute iguruji

(25) लघुबीजाणु (microspore) नर युग्मकोद्भिद (male gametophyte) बनाते हैं तथा लघुबीजाणुओं का बीजाणुधानी से विमोचन (liberation) नर युग्मकोद्भिद के विकास की विभिन्न प्रवस्थाओं में होता है। उदाहरणार्थ, साइकैस (Cycas) में लघुबीजाणु 3-कोशिकीय (3-celled), पाइनस (Pinus) में 4-कोशिकीय (4-celled) तथा इफ़ेडरा (Ephedra) में 5-कोशिकीय (5-celled) प्रवस्था में विमुक्त होते हैं। साइकैस (Cycas) व गिंगो (Ginkgo) को छोड़कर शेष सर्भ वंशों में नर युग्मक (male gamete) अचल (non motile) होते हैं।

(26) स्त्री युग्मकोद्भिद का विकास गुरुबीजाणुओं से होता है। प्रत्येक स्त्री युग्मकोभिद में स्त्रीधानियों (archegonia) की संख्या में विविधता होती है**; उदाहरणार्थ, साइकैस (Cycas) के स्त्री युग्मकोद्भिद में अनेक स्त्रीधानियाँ होती हैं, जबकि पाइनस (Pinus) में दो तथा नीटम (Gnetum) में स्त्रीधानियाँ केवल अण्ड (ovum) से प्रदर्शित होती हैं।**

(27) प्रत्येक स्त्रीधानी में केवल एक अण्ड (egg) तथा एक अण्डधा नाल कोशिका (venter canal cell) होती है। इनमें ग्रीवा नाल कोशिकाएँ (neck canal cells) नहीं पायी जाती हैं।

(28) इस समूह में पौधे वायु परागित (wind pollinated) हैं। पराग कण (pollen grains or microspores) बीजाण्ड के द्वार पर उपस्थित विशेष संरचना, जिसे पराग-कोष्ठक (pollen chamber) कहते हैं, में एकत्रित होते हैं।

(29) नर युग्मक (male gamete) का स्त्रीधानी में प्रवेश पराग नलिका (pollen tube) द्वारा होता है। साइकैस में पराग नलिका चूषकांग (haustoria) के रूप में कार्य करती है, जबकि पाइनस में यह युग्मक वाहक (sperm carrier) के रूप में कार्य करती है।

(30) निषेचन (fertilization) के फलस्वरूप बना युग्मनज़ (zygote) अगली बीजाणुद्भिदी प्रवस्था की मात्र कोशिका (mother cell of the next sporophytic generation) है।

(31) **भ्रूण (embryo) का विकास अंशभाजी (meroblastic) होता है,** अर्थात् भ्रूण युग्मनज़ के केवल एक भाग (आधारीय) से ही विकसित होता है।

(32) जिम्नोस्पर्म में भ्रूणपोष (endosperm) का विकास निषेचन से पूर्व होता है। इनमें द्विनिषेचन (double fertilization) तथा त्रिसंलयन (triple fusion) नहीं होता है, अतः भ्रूणपोष अगुणित (haploid) होता है।

(33) वैलविश्चिया (Welwitschia), नीटम (Gnetum), आदि कुछ जिम्नोस्पर्म को छोड़कर शेष सभी जिम्नोस्पर्म में भ्रूण विकास की प्रारम्भिक अवस्था में मुक्त केन्द्रक विभाजन (free nuclear division) होते हैं। भ्रूण अन्तर्मुखी (endoscopic) होता है, अर्थात् प्ररोह शीर्ष (shoot apex) बीजाण्डद्वार (micropyle) से विपरीत दिशा की ओर दिष्ट होता है।

(34) बहुभ्रूणता (polyembryony) जिम्नोस्पर्म का एक प्रमुख लक्षण है। प्रायः प्रत्येक स्त्री युग्मकोद्भिद में एक से अधिक भ्रूण विकसित होते हैं।

(35) बहुभ्रूणता एक से अधिक अण्ड के निषेचन अथवा एक युग्मनज़ के विभाजन से (विदलन बहुभ्रूणता, cleavage polyembryony) उत्पन्न होती है, परन्तु कार्यिकी स्पर्धा (physiological competition) के कारण प्रत्येक युग्मकोद्भिद में प्रायः केवल एक ही भ्रूण का पूर्ण विकास होता है।

(36) इनमें अण्डाशय (ovary) जैसी कोई संरचना नहीं होती है अतः बीज (seed) फल के अन्दर बन्द नहीं होते हैं तथा नग्न बीजाण्ड (naked ovule) ही बीज में विकसित होते हैं। बीजाण्ड के अध्यावरण (integuments) बीज कवच (seed coat) का कार्य करते हैं।

(37) बीजपत्रों (cotyledons) की संख्या में विविधता पायी जाती है। साइकैस (Cycas)में केवल एक अथवा दो बीजपत्र होते हैं, जबकि पाइनस (Pinus) में इनकी संख्या अधिक होती है।

Aadhar Institute Iguruji

(38) कुछ अपवादों (साइकैस, गिंगो) को छोड़कर, अधिकांश जिम्नोस्पर्म के बीज कुछ समय तक सुसुप्तावस्था (dormant stage) में रहते हैं तथा अनुकूल परिस्थिति आने पर अंकुरित होकर नया बीजाणुद्भिद बनाते हैं।

(39) जिम्नोस्पर्म के बीज तीन पीढ़ियों को प्रदर्शित करते हैं **(i) अध्यावरण (integument) तथा बीजाण्डकाय (nucellus) मात बीजाणुभिद प्रवस्था (अर्थात् पहली बीजाणुद्भिद अवस्था) को प्रदर्शित करते हैं, (ii) भ्रूणपोष (endosperm) युग्मकोद्भिद प्रवस्था में निर्मित भाग है, तथा (iii) भ्रूण (embryo) अगली बीजाणुद्भिद प्रवस्था को दर्शाता है** (चूँकि इसका विकास युग्मनज़ के विभाजन से होता है)।

(40) इस समूह के पौधों में सुस्पष्ट पीढ़ी-एकान्तरण (alternation of generation) देखने को मिलता है। इनमें द्विगुणित बीजाणुद्भिद प्रवस्था प्रधान (dominant) होती है, जबकि अगुणित युग्मकोद्भिद प्रवस्था न्यूनीकृत (reduced) होती है। युग्मकोद्भिद प्रवस्था बीजाणुद्भिद प्रवस्था पर आश्रित (dependent) होती है।

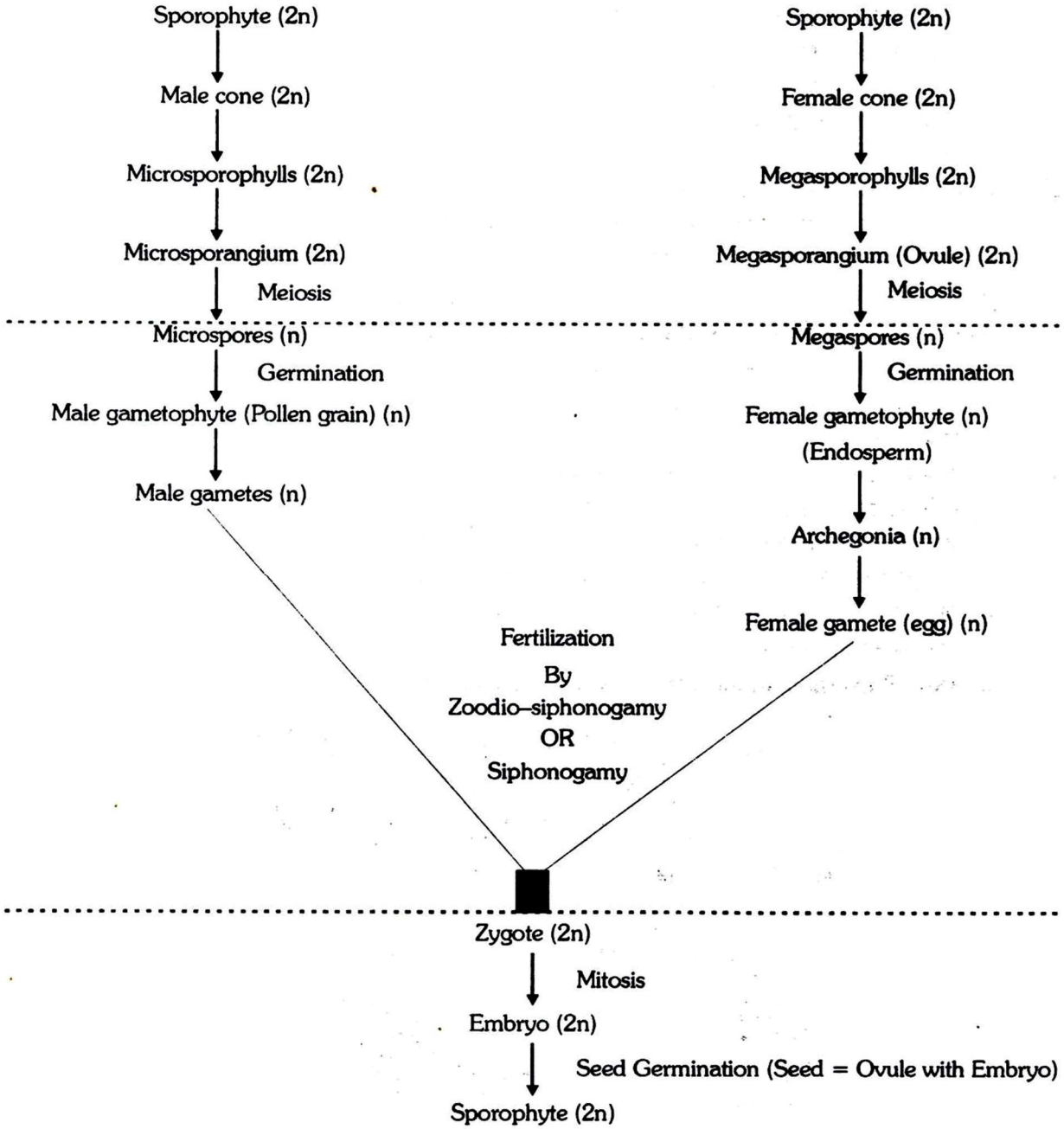

जिम्नोस्पर्म की बन्धुता (Affinities of Gymnosperms)

पादप जगत के विभिन्न समूहों की विकास प्रवृत्तियों (evolutionary tendencies) के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि **जिम्नोस्पर्म, टेरिडोफाइटा तथा ऐन्जियोस्पर्म के बीच की एक कड़ी (connecting link) है।** अतः ये टेरिडोफाइटा तथा ऐन्जियोस्पर्म से अनेक लक्षणों में समानता दर्शाते हैं।

नीचे इनकी उपरोक्त दोनो समूहों से समानताओं तथा विभिन्नताओं का उल्लेख किया गया है।

जिम्नोस्पर्म की टेरिडोफाइट्स से बन्धुता (Affinities of gymnosperms with pteridophytes)

1. समानताएँ (Similarities) -

जिम्नोस्पर्म टेरिडोफाइट्स से निम्नलिखित लक्षणों में समानता दर्शाते हैं।

(1) दोनों समूहों में सुस्पष्ट पीढ़ी एकान्तरण (alternation of generation) पाया जाता है। इन दोनों समूहों में बीजाणुद्भिद प्रवस्था प्रधान है।

(2) बीजाणुद्भिद मूल (root), स्तम्भ (stem), व पत्तियों (leaves) में विभेदित होता है। तरूण अवस्था में पत्तियाँ फर्न (ferns) की पत्तियों के समान कुंडलित (circinately coiled) होती हैं तथा दोनों

(3) तरूण अवस्था में पत्तियाँ फर्न (ferms) की पत्तियों के समूहों में पत्तियाँ पिच्छाकार संयुक्त (pinnately compound) होती हैं।

(4) दोनो समूहों (नीटेलीज़ गण को छोड़कर) के जाइलम में वाहिकाओं (vessels) तथा फ्लोएम में सहकोशिकाओं (companion cells) का अभाव होता है।

(5) अनेक जीवाश्म (fossils) तथा जीवित (living) टेरिडोफाइट्स में जिम्नोस्पर्म के समान द्वितीयक वृद्धि पाई जाती है।

(6) बिषमबीजाणुकता (heterospory) अनेक टेरिडोफ़ाइट्स, जैसे सिलेजिनेला (Selaginella), मार्सीलिया (Marsilea), आज़ोला (Acolla), सैल्वीनिया (Salvinia) तथा कुछ जिम्नोस्पर्म समूह के सभी सदस्यों में पाई जाती है।

(7) कुछ जिम्नोस्पर्म (साइकैस) में बीजाणुधानियाँ (sporangia) फर्न के समान समूह अथवा सोरस (sorus) में पाई जाती हैं।

(8) बीजाणुधानियाँ विशेष पत्तियों, जिन्हें बीजाणुपर्ण (sporophyll) कहते हैं, से संलग्न होती हैं। अधिकांश टेरिडोफ़ाइट्स की भाँति जिम्नोस्पर्म में भी गुरु तथा लघुबीजाणुपर्ण (mega-and microsporophyll) संहत् स्ट्रोबाइलस (strobilus) बनाते हैं।

(9) जिम्नोस्पर्म के कुछ गणों (साइकैडेलीज़, गिंगोएलीज़) में टेरिडोफ़ाइट्स के समान नर युग्मक कशाभिक (flagellate) व गतिशील (motile) होते हैं।

(10) कुछ टेरिडोफ़ाइट्स के भ्रूण विकास में जिम्नोस्पर्म के समान निलम्बक (suspensor) का निर्माण होता है।

(11) अनेक टेरिडोफाइट्स में जिम्नोस्पर्म की भाँति गुरुबीजाणु (megaspore) निषेचन के पश्चात् गुरुबीजाणुधानी (megasporangium) में रहते हैं।

अनेक आद्य (prirnitive) जिम्नोस्पर्म (जैसे साइकैडोफ़िलिकेलीज़ गण के सदस्य) टेरिडोफाइट्स से अत्यधिक समानता दर्शाते हैं। कुछ समय तक वैज्ञानिकों द्वारा ये फ़र्न समझे गये तथा इन्हें **बीजधारी फ़र्न** (seed ferns) कहा गया।

Aadhar Institute iguruii

respectively upstream downstream का decide करते हैं। Genome में 2 adjacent genes अलग–अलग strands पर present हो सकती है और opposite direction में हो सकती है।

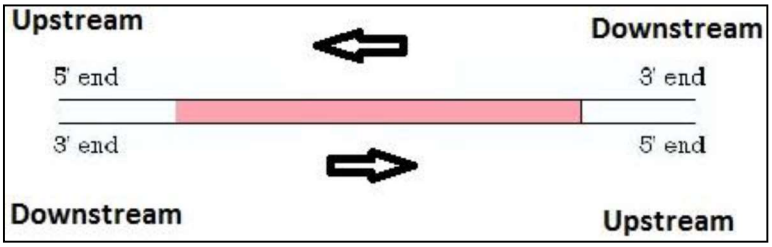

30. Western blot: एक particular type की protein की size, presence, abundance पता करने का method. यह Southern या Northern blotting जैसा होता है, लेकिन इसमें (1) acrylamide gel पर protein mixture electrophoresed करवाया जाता है, और (2) antibody, "probe" के तौर पर use की जाती है, जो radioactive secondary probe (जैसे कि ^{125}I-protein A) द्वारा follow की जाती है।

MOLECULAR MARKERS

Conventional linkage maps सिर्फ उन genes पर based होते है, जो distinct morphological effects produce करते है। इस प्रकार के maps की limitations है: (i) even best studied species में भी इस प्रकार के genes का number limited होता है (ii) इनकी mapping tedious और time taking है, और (iii) quantitative genes traits (= quantitative trait loci) को govern करने वाले genes को map नहीं किया जा सकता। इसलिए attempts molecular markers के use पर focus किये गये है। *i.e.,* molecular level पर strains के बीच differences, *e.g,* linkage mapping के लिए protein और DNA.

5 तरह के molecular markers होते है: -

(i) isozymes

(ii) restriction fragment length polymorphisms (RFLPs)

(iii) random amplified polymorphic DNAs (RAPDs)

(iv) variable number of tandemly repeat (VNTR) DNA

(v) short tandem repeat (STR) DNA.

Aadhar Institute Iguruji

ISOZYMES:

Isozymes एक enzyme की variant form है उनके net electrical charges में differences के कारण वे usually electrophoresis के द्वारा detectable होते है। ये पहले use किये गये, इनके कारण molecular markers के लिए applicable कई principles का development हुआ है। लेकिन, अधिकतर species में isozyme loci के limited number के कारण focus RFLPs और RAPDs पर shift हुआ है, although isozymes में interest अभी तक लिया जाता है।

Restriction Fragment Length Polymorphism (RFLP)

Restriction fragment length polymorphism यह denote करता है कि एक single restriction enzyme एक species या different related species के different strains के genomic DNA के same stretch से different length के fragments produce करता है।

RFLPs इस प्रकार detect किये जाते है:

(i) Large molecular weight genomic: DNA को कई strains या related species से isolate किया गया है।

(ii) इन DNAs को फिर एक selected restriction enzyme से digest किया गया है।

(iii) इन digests के fragments को electrophoresis के द्वारा separate किया गया है।

(iv) Resulting gel lanes को suitable solid support पर transfer किया गया है और एक suitable radio-label probe से DNA : DNA hybridization (Southern hybridization) favouring conditions में expose किया गया है।

(v) Free probes (जो hybridization में involve नहीं होते है) को remove किया गया है।

(vi) जिन fragments से probe hybridize हो चुका है, उन्हें radioautography के द्वारा एक suitable photofilm पर distinct bonds की तरह film करके detect किया जा सकता है।

RFLPs का generated pattern mainly निम्नलिखित पर depend करता है: -

(i) Selected strains/species के DNAs में difference.

(ii) Use किया गया restriction enzyme.

(iii) Southern hybridization के लिए employed DNA probe.

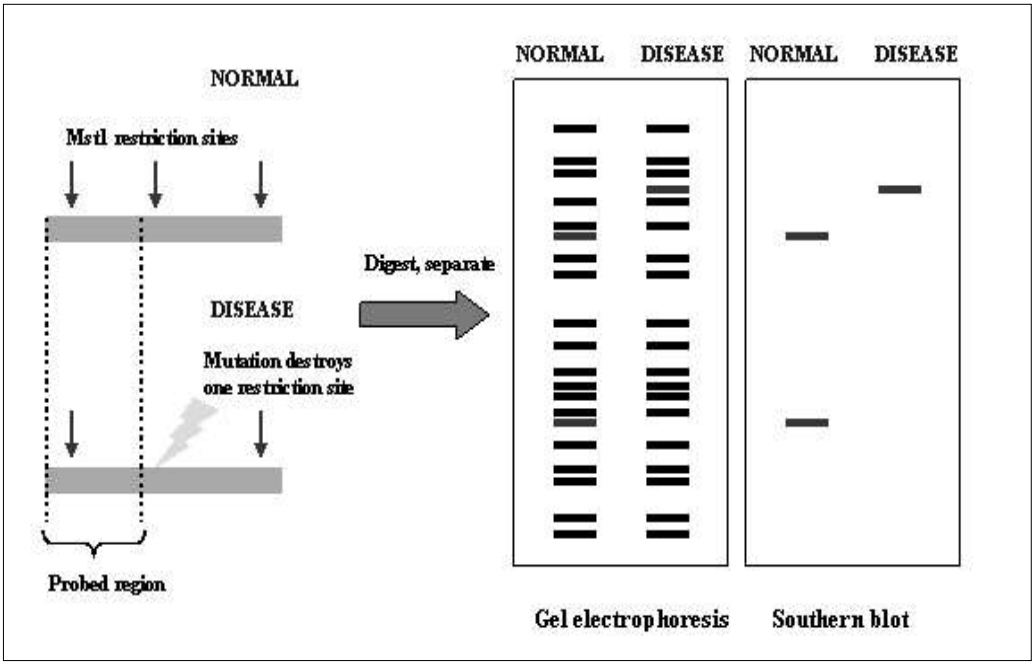

Organisms के DNAs में निम्नलिखित changes के कारण detectable RFLPs generate होती है: -

(i) Use किये गये restriction enzymes की recognition sites की base sequences में changes.

(ii) Concerned genomic DNA के stretch में relatively large deletions.

(iii) Relatively large additions अब बहुत अधिक number में restriction enzymes available है, यह इस प्रकार के enzymes के selection को permit करता है जो RFLPs generate कर सकते है।

निम्न से DNA probes obtain किये जा सकते है: -

(i) **genomic libraries**

(ii) **cDNA libraries** (ये random या specific हो सकते है)

(iii) **chromosome-specific libraries** addition/ substitution lines से obtain किये जा सकते है, flow-sorted chromosomes, chromosome-specific repeated sequences या micro-dissected chromosomes से obtained chromosome-specific libraries. Single-copy sequences (most likely, structural genes को represent करती है) best probes है, लेकिन low-copy sequences और even multiple-copy sequences भी use की जाती है। Generally, same species से prepared probes use किये जाते है, लेकिन दूसरी species से obtained probes भी employ किये जा सकते है।

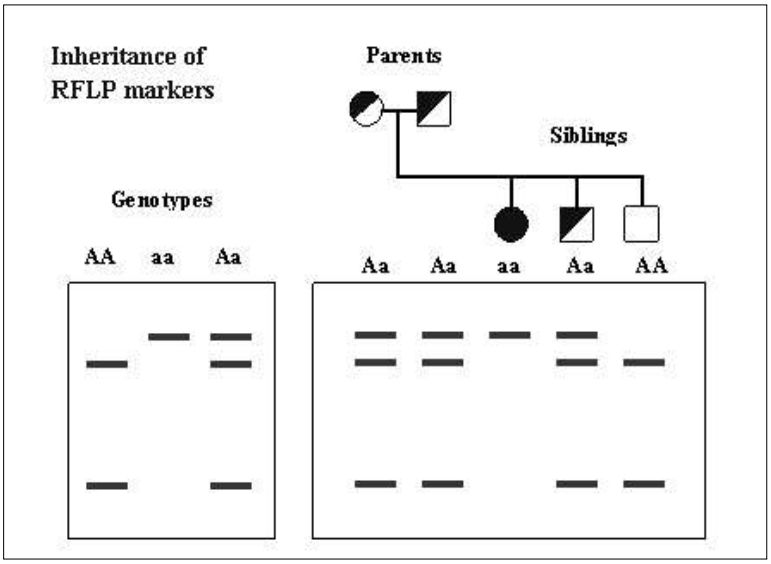

एक RFLP different species/strains की gel lanes पर एक band के differential movement की तरह detect किया जा सकता है, प्रत्येक एक ऐसा band एक single RFLP locus की तरह regard किया जाता है। यह note किया जा सकता है कि एक RFLP locus को केवल एक specific RESTRICTION enzyme के साथ एक specific DNA probe के combination से ही define किया जा सकता है।

Different RFLP loci के बीच और RFLP loci और oligogenes/polygenes के बीच linkage निम्नलिखित की study से determine किया जा सकता है: -

(i) एक suitable cross के द्वारा derived recombinant inbreds का एक set

(ii) इस प्रकार के एक cross से F_2 या BACKCROSS progeny (एक *suitable cross* का मतलब है concerned RFLP loci और/या oligogenes/polygenes के लिए differ करने वाले 2 strains के बीच cross)

Conventional linkage maps के similar RFLP maps readily prepare किये जा सकते है और ये conventionally prepared genetic maps के साथ effectively integrate किये जा सकते है। इस प्रकार की mapping के लिए efficient protocals develop किये गये है। RFLP maps specific chromosomes/chromosome arms को assign किये जा सकते है, जो निम्नलिखित पर based है:

(i) specific chromosomes के लिए already assigned genetic markers के साथ linkage

(ii) addition/substitution lines का use

(iii) suitable translocation stocks की study

(iv) monosomic/trisomic lines को employ करके

(v) polytene chromosomes से *in situ* hybridization

RFLPs have several unique advantages:

(i) RFLP loci का number बहुत ज्यादा है इसलिए chromosomes के बहुत small segments को भी map किया जा सकता है, *ideally* प्रत्येक cistron को map किया जा सकता है।

(ii) mapping necessarily gene function पर depend नहीं करती।

(iii) even quantitative trait loci को भी map किया जा सकता है जो conventional techniques के through virtually impossible है।

(iv) यह conventional linkage mapping के comparison में आश्चर्यजनक रूप से rapid है।

(v) fewer individuals (25-50 individuals/F2 generation) को study करने की आवश्यकता होती है।

लेकिन, (i) यह technique conventional linkage mapping से 100-1000 times ज्यादा costly है, (ii) यह radioactive probes utilize करता है जो handle करने के लिए risky और dispose off करने के लिए difficult है। Further, (iii) इस technique के लिए considerable skill और effort की आवश्यकता होती है और **RAPDs** (random amplified polymorphic DNAs) से बहुत अधिक समय की आवश्यकता होती है।

RFLPs may have the following applications:

(i) एक RFLP locus के साथ linked gene का identification और isolation

(ii) उनके unequivocal identification के लिए strains/ varieties की *fingerprinting*

(iii) Quantitative trait loci की linkage mapping

(iv) एक quantitative trait को affect करने वाली most important loci का identification

(v) Tightly linked quantitative trait loci के लिए highly efficient indirect selection और उन oligogenes के लिए भी जिनके लिए एक direct selection difficult या costly हो सकता है।

(vi) उन chromosome segments alterations का determination जिनसे best results yield किये जा सकते है।

(vii) Various strains या species के बीच relationships establish करने के लिए।

(viii) अभी तक 'mysterious' polygenes etc. का function और identity समझना। कई crop species के लिए RFLP maps develop किये गये है, *e.g.,* wheat, rice, maize etc.; यह आशा की जाती है कि जल्दी ही *Arabidopsis thaliana* का पूरा genome saturation तक या even full sequence में map हो जाएगा।

RANDOM AMPLIFIED POLYMORPHIC DNAs (RAPDs)

Random amplified polymorphic **DNAs** (*rapids* की तरह pronounced किया जाता है) एक PCR (polymerase chain reaction) equipment में DNA denaturation-renaturation-DNA replication की repeated cycles से produce किया जाता है। एक selected strain का genomic DNA एक seleted oligonucleotide (एक short polynucleotide) की excess के साथ mix किया जाता है और फिर यह mixture PCR में DNA amplification के लिए use किया जाता है। Genomic DNA का amplified segment (replicated repeatedly) उस segment से continuous है जो primer की तरह used oligonucleotide से homologous है।

Used oligonucleotide से homologous DNA segment रखने वाले strains के लिए agrose gel पर एक distinct band देखा जाएगा, जबकि यह band दूसरे strains के लिए absent होगा। इस प्रकार RAPDs bands एक strain में या तो 'absent' या 'present' होते है और F1's हमेशा bands show करेंगे (dominant expression). इसके contrast में, RFLP bands parents में differential migration से detect किये जाते है और F1's generally दोनों parents के bands को express करते है।

RAPDs analysis genome DNA के short segment की base sequence की availability के द्वारा facilitate होता है, इस segment में variation को एक oligonucleotide generate करके detect किया जा सकता है, जो इस segment के लिए homologous है। लेकिन इन studies के लिए कोई भी base sequence रखने वाला oligonucleotide use किया जा सकता है। Oligonucleotides एक oligonucleotide synthesizer के प्रयोग से prepare किये जा सकते है। RAPDs से obtained information RFLPs की तरह, linkage mapping के लिए use की जा सकती है।

यह important है कि RAPDs approach restriction enzymes (जो बहुत costly है) नहीं करता और किसी भी तरह के probes को utilize करता है (यह suitable probe develop करने के लिए आवश्यक effort को और radiolabelled materials को handle करने की risk से बचाता है) PCR में यह एक high temperatures से resistant DNA polymerase को utilize करता है, जो DNA denaturation के लिए आवश्यक है, इस प्रकार यह DNA amplification के लिए repeatedly reuse किया जा सकता है। इस प्रकार RAPDs cost और effort दोनों में savings को represent करता है और इनका use rapidly बढ रहा है। RADPs की RFLPs की तरह same applications है।